॥ ओ३म् ॥

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

Date of Printing = 05-03-24
प्रकाशन दिनांक = 05-03-24

मार्च २०२४

वर्ष ५३ : अङ्क ५
दयानन्दाब्द : १९९
विक्रम-संवत् : माघ-फागुन २०८०
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,१२४

संस्थापक : **स्व० ला० दीपचन्द आर्य**
प्रकाशक व सम्पादक : धर्मपाल आर्य
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :
दयानन्दसन्देश (मासिक)
४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

कुल पृष्ठ २८
एक प्रति १५.०० रु०

वार्षिक शुल्क १५०) रुपये
पंचवर्षीय शुल्क ५००) रुपये
आजीवन शुल्क ११००) रुपये
विदेश में ५०००) रुपये

इस अंक में

❑ वेदोपदेश २
❑ गुरुकुल कांगड़ी को आर्य समाज से.... ३
❑ सांख्यदर्शन में हेत्वाभास ५
❑ सन्देशखाली का राक्षस कौन ? ९
❑ आर्य समाज ने मुझे पूज्य बनाया ! ११
❑ वो निडर संन्यासी जिसने अंग्रेज सरकार... १४
❑ ब्रह्मचर्य १५
❑ मनुष्य की सार्थकता मननशील होने १६
❑ आदर्श स्वरूप महापुरुषों के चरित्र..... १९
❑ धर्म-चेतना-अन्ध-श्रद्धा से पोषित अधर्म २२
❑ अंग्रेजों को खटका आर्यसमाज २४
❑ क्रोध अभिशाप है, इससे बचिये ! २६

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण – ४००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ६००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। —महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश—मा निन्दत य इमां मह्यं रातिं देवो ददौ मर्त्याय स्वधावान् ।
पाकाय गृत्सो अमृतो विचेता वैश्वानरो नृतमो यह्वो अग्निः ॥

—ऋ० ४।५।२

शब्दार्थ—मा=मत, उसकी **निन्दत**=निन्दा करो **यः**=जिस **स्वधावान्**=स्वशक्तिसम्पन्न [परनिरपेक्ष] **अमृतः**=अविनाशी **विचेताः**=विशेषज्ञ **वैश्वानरः**=सब नरों के हितकारी **नृतमः**=नेताओं में श्रेष्ठ **यह्वः**=बलधारी **गृत्सः**=उपदेशकारी **अग्निः**=सबकी उन्नति करने वाले **देवः**=देव ने **मह्यम्**=मुझ **मर्त्याय**=मरणधर्मा के लिए **पाकाय**=पवित्र करने के लिए, पक्का करने के लिए **इमाम्**=यह **रातिम्**=दान **ददौ**=दिया है।

व्याख्या—यह सारा जहान भगवान् ने जीवों को दान दे डाला है। किसी उपकार के बदले में नहीं, क्योंकि वह **स्वधावान्** है, अपने कार्यों में सृष्टि रचना, पालना, संहारणा में किसी की सहायता की अपेक्षा नहीं करता, अतः भगवान् का दान सर्वथा निष्काम है।

भगवान् **विचेता**=विशेषज्ञ है। सबकी आवश्यकताओं को जानता है, अतः उन सबका विचार करके उसने यह सृष्टि रची है। मूर्ख, विद्वान, पुण्यात्मा, पापात्मा निर्बल-बलवान्, धनी-दरिद्र, राजा प्रजा आदि सभी का निर्वाह इसी से होता है। इस सृष्टि बनाने का प्रयोजन है कि इसमें ग्रस्त जीव उठे, उन्नति करे, आगे बढ़े। वह अग्नि है, सबको आगे ले जाता है। उसका उपदेश भी आगे बढ़ने का है-उच्छ्रयस्व महते सौभगाय ।[१] परम सौभाग्य के लिए उन्नति कर।

मैं मर्त्य हूँ, मरणधर्मा हूँ। जाने किस समय मर जाऊँ। वह अमृत है, अविनाशी है। काल का भी काल है। उस अमृत के पास अमृत है। जाने, मुझे भी अमृत होने के लिए इस दान में अमृत ही दिया हो! तुम क्यों उनकी निन्दा करते हो ? मत करो निन्दा। वह वैश्वानर है। सब नरों का नर है, वह गृत्स है, उपदेशक है, इस दान के साथ इसका ज्ञान भी देता है। मैं कच्चा हूँ, अतएव अपवित्र हूँ, मुझे पक्का करने के लिए, पाक-पवित्र करने के लिए उसने मुझे यह दान दिया है। मैं उसकी निन्दा करूँ? अपने गृत्स की, गुरु की निन्दा में नहीं सुनता। **'कर्णौ तदा पिधातव्यौ गुरुनिन्दा भवेद्यदा'** — तब कान बन्द कर लेने चाहिएँ, जब गुरु निन्दा होने लगे। तुम भगवान् की, सर्वहितकारी गुरु, सर्वज्ञ गुरु की निन्दा मत करो, अन्यथा मैं तुम्हारी बात नहीं सुनूँगा। मैं तो कहता हूँ कि भगवान् **'वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः।'** ऋ०८।१।६ मेरे पिता की अपेक्षा भी मेरे लिए अधिक पूजनीय है, मेरे भाई से भी अधिक सत्करणीय है। माता, पिता, भ्राता की अपेक्षा अधिक पूजनीय

(शेष पृष्ठ १५ पर)

१. ऋ० ३।८।२

गुरुकुल कांगड़ी को आर्य समाज से अलग करना सांस्कृतिक अपराध होगा !

–धर्मपाल आर्य

आज सवाल हो सकता है कि गुरुकुल कांगड़ी को आर्य समाज से और आर्य समाज को गुरुकुल कांगड़ी से अलग कौन करना चाहता है? ये कोई रास्ता है या षड्यंत्र! कई तरह के विचार मन में आ सकते हैं। और हम कह सकते हैं कि विचार का आना ही मनुष्य के लिए रास्ता बनाता है। क्योंकि विचार से ही दुनिया बनती और बिगड़ती है। १९ वीं सदी में मूलशंकर के मन में विचार आया वो स्वामी दयानन्द बने और ना केवल स्वयं के लिए बने बल्कि समाज और संसार को भी अपने विचारों से मार्ग दिखाया। उन्हीं विचारों की विरासत है ये गुरुकुल कांगड़ी विश्व-विद्यालय। उनके विचारों की शरणस्थली बना ये गुरुकुल जिसका आरम्भ ३४ विद्यार्थियों के साथ कुछ फूस की झोपड़ियों में किया गया था। जिसने समय-समय पर ना जाने कितने विद्वान, कितने क्रान्तिकारी, कितने सामाजिक कार्यकर्ता इस देश और समाज को दिए। किन्तु आज वो विरासत खतरे में है और उस विरासत को मिटाने की तैयारी हो चुकी है।

जिस गुरुकुल को ब्रिटिश सरकार के सीने पर खड़ा किया। जिस गुरुकुल कांगड़ी राष्ट्रवाद की बहती धारा को देख वायसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड तक डर गये थे, आज वो गुरुकुल उसके अधिकांश कर्मचारी, शिक्षा मंत्रालय से लेकर यूजीसी और डॉ० सत्यपाल आदि सब मिलकर स्वामी श्रद्धानन्द की खड़ी की गयी संस्था को मिटाने तक का प्रयास कर रहे हैं ? असल में गुरुकुल के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द महर्षि दयानन्द के सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' में प्रतिपादित शिक्षा संबंधी विचारों से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने १८९७ में अपने पत्र 'सद्धर्म प्रचारक' द्वारा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के पुनरुद्वार का प्रबल आंदोलन आरम्भ किया। ३० अक्टूबर, १८९८ को उन्होंने इसकी विस्तृत योजना रखी। नवंबर, १८९८ ई० में पंजाब के आर्य समाजों के केंद्रीय संगठन 'आर्य प्रतिनिधि सभा' ने गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव स्वीकार किया और स्वामी श्रद्धानन्द ने यह प्रतिज्ञा की कि वे इस कार्य के लिए, जब तक ३०,००० रुपया एकत्र नहीं कर लेंगे, तब तक अपने घर में पैर नहीं रखेंगे। तत्कालीन परिस्थितियों में इस दुस्साध्य कार्य को अपने अनवरत उद्योग और अविचल निष्ठा से उन्होंने आठ मास में पूरा कर लिया। १६ मई, १९०० को पंजाब के गुजराँवाला स्थान पर एक वैदिक पाठशाला के साथ गुरुकुल की स्थापना कर दी गई।

गुरुकुल की स्थापना भले ही हो गई थी, परंतु स्वामी श्रद्धानन्द को यह स्थान उपयुक्त प्रतीत नहीं हुआ। वे शुक्ल यजुर्वेद के एक मंत्र (२६. १५) **'उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां। धिया विप्रो अजायत'** के अनुसार नदी और पर्वत के निकट कोई स्थान चाहते थे। इसी समय नजीबाबाद के धर्मनिष्ठ रईस मुंशी अमनसिंह जी ने इस कार्य के लिए महात्मा मुंशीराम को १,२०० बीघे का अपना कांगड़ी ग्राम दान दिया। हिमालय की उपत्यका में गंगा के तट पर सघन रमणीक वनों से घिरी कांगड़ी की भूमि गुरुकुल के लिए

आदर्श थी। अत: यहाँ घने जंगल साफ कर कुछ छप्पर बनाए गए और होली के दिन सोमवार, ४ मार्च, १९०२ को गुरुकुल गुजराँवाला से कांगड़ी लाया गया।

आर्य जनता के उदार दान और सहयोग से इसका विकास तीव्र गति से होने लगा। १९०७ ई. में इसका महाविद्यालय विभाग आरम्भ हुआ। १९१२ ई० में गुरुकुल कांगड़ी से शिक्षा समाप्त कर निकलने वाले स्नातकों का पहला दीक्षांत समारोह हुआ। इस समय सरकार के प्रभाव से सर्वथा स्वतंत्र होने के कारण इसे चिरकाल तक ब्रिटिश सरकार राजद्रोही संस्था समझती रही। यहाँ तक सन १९१७ ई. में वायसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड भी गुरुकुल पहुंचे। १९२१ ई. में आर्य प्रतिनिधि सभा ने इसका विस्तार करने के लिए वेद, आयुर्वेद, कृषि और साधारण (आर्ट्स) महाविद्यालयों को बनाने का निश्चय किया। १९२३ में महाविद्यालय की शिक्षा और परीक्षा विषयक व्यवस्था के लिए एक शिक्षापटल बनाया गया। देश के विभिन्न भागों में इससे प्रेरणा ग्रहण करके, इसके आदर्शों और पाठविधि का अनुसरण करने वाले अनेक गुरुकुल स्थापित हुए।

प्रारम्भ से ही गुरुकुल में सब विषयों की शिक्षा राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम द्वारा दी जाती थी। विज्ञान, गणित, पाश्चात्य दर्शन आदि विषय भी हिन्दी में ही पढ़ाए जाते थे। जब सन १९०७ में महाविद्यालय विभाग खुला तो उसमें भी हिन्दी को ही माध्यम रखा गया। उस समय हिन्दी में उच्च शिक्षा देना एक असम्भव बात समझी जाती थी। गुरुकुल ने इसे कार्यरूप में परिणत करके दिखा दिया। उस समय आधुनिक विद्वानों की पुस्तकें हिन्दी में नहीं थी। गुरुकुल के उपाध्यायों ने पहले-पहल इस क्षेत्र में काम किया और गुरुकुल के अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थ प्रकाशित हुए। प्रो० महेशचरण सिंह की 'हिन्दी कैमिस्ट्री', प्रो० साठे का 'विकासवाद', श्रीयुत गोवर्धन की 'भौतिकी' और 'रसायन', प्रो० रामशरणदास सक्सेना का 'गुणात्मक विश्लेषण', प्रो० सिन्हा का 'वनस्पतिशास्त्र', प्रो० प्राणनाथ का 'अर्थशास्त्र', 'राष्ट्रीय आय-व्यय शास्त्र' और 'राजनीतिशास्त्र', प्रो० बालकृष्ण का 'अर्थशास्त्र' और 'राजनीतिशास्त्र' और प्रो० सुधाकर का 'मनोविज्ञान' हिन्दी में अपने-अपने विषय के पहले ग्रन्थ हैं। हिन्दी में वैज्ञानिक ग्रन्थों की रचना गुरुकुल द्वारा ही प्रारम्भ हुई।

आप सोच रहे होंगे इतना सब कुछ होने के बाद आज इस गुरुकुल को मिटाने का कार्य क्यों किया जा रहा है? दरअसल यह अपने आप में एक बड़ा षड्यंत्र है और इसमें एक नहीं कई लोग शामिल है अधिकांश कर्मचारी, शिक्षा मंत्रालय से लेकर यू०जी०सी० और डॉ० सत्यपाल जो गुरुकुल को आर्य समाज से अलग करना चाहते हैं। क्योंकि वो जानते हैं कि आर्य समाज संस्था की शक्ति गुरुकुल से निकलती है। अगर गुरुकुल ही नहीं रहेंगे तो संस्था स्वयं ही मिट जाएगी। अगर संस्था मिटेगी तो वो लोग गुरुकुल को अपने विचारों का अड्डा बना लेंगे।

वर्तमान में गुरुकुल की स्वामिनी एवं स्पॉन्सरिंग समिति का दायित्व तीन आर्य प्रतिनिधि सभाएं जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा एवं दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त रूप से निभा रही हैं। डॉ० सत्यपाल सिंह ने ३० दिसम्बर २०२२ को कुलाधिपति पद से त्यागपत्र दे दिया था। जिसे स्पॉन्सरिंग समिति ने स्वीकार कर लिया था और उनके स्थान पर ३ मार्च २०२३ को नए कुलाधिपति के रूप में सुदर्शन शर्मा की नियुक्ति कर दी थी। किंतु उसके पश्चात् भी डॉ० सत्यपाल सिंह ने अपने पद एवं प्रभाव का दुरुपयोग करते

(शेष पृष्ठ २७ पर)

सांख्यदर्शन में हेत्वाभास

–उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर (मो०–९८४५०५८३१०)

सांख्यदर्शन वैसे तो प्रकृति, पुरुष व ईश्वर की सिद्धि करने वाला ग्रन्थ है, परन्तु सिद्धियां देने के कारण, उसमें न्याय दर्शन के कई अंश कार्यान्वित होते हैं । पूर्व में मैंने सांख्यदर्शन में प्राप्त होने वाले सामान्यतोदृष्ट अनुमान व उपमान प्रमाण के कुछ उदाहरण दिए थे । अबकी बार हम पंचम अध्याय में दिए कुछ हेत्वाभासों पर दृष्टि दौड़ाते हैं । इस अध्याय में अनेकों पूर्वपक्षी तर्क दर्शाए गए हैं, जो कि प्रायः हेत्वाभास हैं । न्यायदर्शन में परिभाषित हेत्वाभास सम्यक्तया समझा नहीं जाता है । आशा है इन उदाहरणों से इस विषय पर कुछ प्रकाश पड़ेगा ।

हेत्वाभास किसी तथ्य को स्थापित करने के लिए वह हेतु होता है जो दिखता तो हेतु जैसा है, परन्तु उसमें कुछ दोष होता है, जिसके कारण वह तथ्य को स्थापित करने में अक्षम हो जाता है। उसको पहचानने और उसका निराकरण करने के लिए हेत्वाभासों के विभिन्न प्रकारों को समझना आवश्यक है । इसलिए सर्वप्रथम हम हेत्वाभासों की परिभाषाएं देखते हैं । न्यायदर्शन के प्रवर्तक गौतम ने पहले हेत्वाभासों की सूची दी–

सव्यभिचारविरुद्धप्रकरणसमसाध्यसमकालातीता हेत्वाभासाः ॥न्यायदर्शनम् १।२।४॥

अर्थात् हेत्वाभास के प्रकार हैं – सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम, साध्यसम व कालातीत । आगे गौतम इन हेत्वाभासों को परिभाषित करते हैं ।

अनैकान्तिकः सव्यभिचारः ॥न्यायदर्शनम् १।२।५॥

अर्थात् जिस हेतु से केवल एक निष्कर्ष नहीं निकलता, अर्थात् जो तथ्य को स्थापित स्वयं नहीं कर सकता क्योंकि वह किसी और तथ्य का भी कारण हो सकता है, ऐसे तर्क को सव्यभिचार हेत्वाभास कहते हैं ।

सिद्धान्तमभ्युपेत्य तद्विरोधी विरुद्धः ॥न्यायदर्शनम् १।२।६॥

अर्थात् जब वादी किसी सिद्धान्त को स्वीकारने के पश्चात्, उस सिद्धान्त के विपरीत हेतु देता है, तब वह हेतु विरुद्ध हेत्वाभास कहलाता है । किसी भी चर्चा में दोनों वादी कुछ सिद्धान्तों को पूर्व-सिद्ध जानकर चर्चा में प्रवृत्त होते हैं । कभी-कभी केवल एक ही वादी किसी तथ्य को सिद्ध मानता है, परन्तु प्रायः दोनों ही वादी कुछ तथ्यों पर सहमति जताते हैं ।

यस्मात् प्रकरणचिन्ता स निर्णयार्थमपदिष्टः प्रकरणसमः ॥न्यायदर्शनम् १।२।७॥

चर्चा के बीच में किसी अन्य तथ्य को स्थापित करते समय, जब उसको स्थापित के रूप में हेतु दिया जाए, तो उसे प्रकरणसम हेत्वाभास कहते हैं । इसे ऐसे समझा जा सकता है कि चर्चा में किसी भी वादी ने एक तथ्य को सिद्धान्त नहीं माना है । फिर कोई एक वादी उस तथ्य को सिद्ध रूप में प्रस्तुत करता है, चाहे उस तथ्य को मनवाने की दृष्टि से, अथवा अपने हेतु को बल देने की दृष्टि से, तो वह हेतु मान्य नहीं होता ।

साध्याविशिष्टः साध्यत्वात् साध्यसमः ॥न्यायदर्शनम् १।२।८॥

जो चर्चा का प्रमुख विषय होता है, उसे साध्य कहते हैं, क्योंकि उसके स्थापन की आवश्यकता है । यदि उसी तथ्य को, भिन्न शब्दों में या भिन्न प्रकार से, हेतु के रूप में प्रस्तुत किया जाए, तो उस हेतु को साध्यसम हेतु कहते हैं ।

कालात्ययापदिष्टः कालातीतः ॥न्यायदर्शनम् १।२।९॥

जिस हेतु में काल का अतिक्रमण हो रहा हो, उसे कालातीत हेत्वाभास कहते हैं । थोड़ा कठिन विचार होने के कारण, इसका यहां एक उदाहरण देख लेते हैं । न्यायदर्शन के प्राचीनतम उपलब्ध वात्स्यायन के भाष्य में इसके लिए यह उदाहरण दिया गया है – "शब्द नित्य है, संयोग से व्यक्त होने के कारण, रूप के समान ।" यहां साध्य शब्द की नित्यता है, हेतु संयोग से व्यक्त होना है, दृष्टान्त रूप है । अब, किसी वस्तु का रूप तब ही व्यक्त होता है, जब उस वस्तु का प्रकाश से संयोग होता है । वस्तु तो अंधेरे में भी थी, उसका आकार भी था, परन्तु वह प्रकट संयोग से हुआ। इस प्रकार वस्तु का रूप एक प्रकार से 'नित्य' था, परन्तु ऐसा प्रकट नहीं हो रहा था । वादी शब्द की नित्यता को भी इसी प्रकार का बताता है । तब इसका निराकरण यह है कि रूप तब तक प्रकट होता है, जब तक प्रकाश होता है, परन्तु शब्द तो, जैसे घण्टे व बजाने वाली लकड़ी के समान, संयोग के बाद भी उपलब्ध होता है । इस प्रकार दृष्टान्त व हेतु में काल का साम्य नहीं है, काल का अतिक्रमण हो गया है। इसलिए वह हेतु हेतु न होकर, कालातीत हेत्वाभास है ।

हेत्वाभासों के इस ज्ञान से समृद्ध होकर, अब हम सांख्यदर्शन के पांचवें अध्याय की ओर कूच करते हैं । संसार में ईश्वर की भूमिका के विषय में प्रतिवादी चर्चा छेड़ता है–

नेश्वराधिष्ठिते फलनिष्पत्तिः कर्मणा तत्सिद्धेः ॥ साङ्ख्यदर्शनम् ५।२॥

अर्थात् जीवों के फल की निष्पत्ति तो कर्म से ही सिद्ध हो जाती है, उसमें ईश्वर के स्वामित्व की आवश्यकता नहीं है । अर्थात् वादी इंगित कर रहा है कि ईश्वर की फल प्रदान में कोई भूमिका नहीं है ।

स्वोपकारादधिष्ठानं लोकवत् ॥ साङ्ख्यदर्शनम् ५।३॥

(अथवा) अपने उपकार के लिए ही उसका स्वामित्व हो, जिस प्रकार लोक में होता है । लोक में प्रायः सम्पत्ति के स्वामी केवल अपने उपकार का ध्यान रखते हैं, अपने कर्मियों का नहीं । सो, अच्छे कर्म सम्भवतः इसलिए विहित हैं कि उनसे परमात्मा का भी कुछ भला हो रहा हो । (यह भावना अनेक प्राचीन सभ्यताओं में पाई जाती है, जहां जीवों को ईश्वर का दास माना जाता है ।)

लौकिकेश्वरवदितरथा ॥ साङ्ख्यदर्शनम् ५।४॥

अन्यथा परमात्मा लौकिक ईश्वर (राजा) के समान हो – जो कर (सत्कर्म) संचित करके, उससे प्रजा (जीव) का ही भला करता हो ।

पारिभाषिको वा ॥ साङ्ख्यदर्शनम् ५।५॥

या वह कुछ भी न करता हो, केवल पारिभाषिक हो, बिना कुछ हस्तक्षेप किए संसार में विद्यमान हो।

इस प्रकार ईश्वर के विषय में विभिन्न मत प्रस्तुत किए गए हैं । ये किस प्रकार से हेत्वाभास हैं, यह कपिल के प्रत्याख्यानों से स्पष्ट हो जाएगा । **सूत्र ५।२ के उत्तर में वे कहते हैं–**

न रागादृते तत्सिद्धिः प्रतिनियतकारणात् ।।साङ्ख्यदर्शनम् ५।६।।

राग (–द्वेष) के बिना कर्मफल सिद्ध नहीं होता, क्योंकि प्रत्येक (अन्य क्रिया का) नियत कारण होता है । पृथिवी सूर्य के चारों ओर घूमती है, परन्तु इस क्रिया का कोई फल नहीं होता । उनके कारण इतने नियत होते हैं कि हम मंगल को भी यान भेज सकते हैं ! इसी प्रकार, विवेक ख्याति प्राप्त योगी के कर्मों का भी कोई फल नहीं होता । परन्तु किसी भौतिक इच्छा से किए गए कर्म, जो इच्छा राग अथवा द्वेष के कारण होती है, का सदैव फल होता है । तात्पर्य यह है कि क्रियाओं के इस भेद को जानने के लिए किसी चेतन सत्ता की आवश्यकता है जो भेदानुसार बुद्धिपूर्वक फल निर्धारित करे । वह सत्ता ही परमेश्वर है ।

इस प्रत्युत्तर से हम जान पाते हैं कि ५।२ में कहे कर्म के दो प्रकार सम्भव हैं, परन्तु उनमें से केवल एक प्रकार फल को निष्पन्न करता है । इसलिए अनैकान्तिक होने से **५।२ सव्यभिचार हेत्वाभास है ।**

५।३ का उत्तर है–

तद्योगेऽपि न नित्यमुक्तः ।।साङ्ख्यदर्शनम् ५।७।।

अर्थात् यदि परमात्मा जीव के कर्म से किसी लाभ से युक्त हो रहा होता, तो वह नित्यमुक्त नहीं हो सकता है । यह एक सर्वतन्त्र सिद्धान्त माना गया है कि परमात्मा नित्यमुक्त है । अब यदि वह जीव के कर्म से लाभ प्राप्त करेगा, तो वह जीव पर आश्रित हो जाएगा; उससे बन्ध जाएगा, उसके कर्म के फल से भी बन्ध जाएगा । तब वह सब से स्वतन्त्र कैसे हो सकता है? नित्यमुक्त कैसे हो सकता है ?

क्योंकि यहां माने हुए सिद्धान्त का विरोध हो रहा है, इसलिए **५।३ विरुद्ध हेत्वाभास है ।**

फिर कपिल ५।४ का प्रत्युत्तर देते हैं–

प्रधानशक्तियोगाच्चेत् संगापत्तिः ।।साङ्ख्यदर्शनम् ५।८।।

यदि परमात्मा का किसी प्रकार से प्रधान (प्रकृति) की शक्ति से योग माना जाए, तो उसमें प्रकृति से संग होने का दोष आ जाएगा । अर्थात् आपने राजा के समान कर इकट्ठा करके कर्मानुसार बांटने वाला जो ईश्वर को बताया, उसमें कर्म इकठ्ठा होकर परमात्मा में अर्पित हो जाएगा, प्रधान की शक्ति के ऊपर परमात्मा के विशेष नियन्त्रण के द्वारा । फिर वह प्रकृति की उसी शक्ति से कर्मफल सबमें बांट देगा । परन्तु जो कर्म उसके 'बैंक अकाउण्ट' में इकठ्ठा होगा, वह वस्तुतः उसी में इकठ्ठा होगा, अर्थात् उसका कर्मों से, और इसलिए प्रकृति से, सम्बन्ध हो जाएगा । यह संग सभी वादियों को अमाननीय है, इसलिए, हेतु न होकर, **५।४ विरुद्ध हेत्वाभास ही है ।**

५।५ का प्रत्युत्तर इस प्रकार है–

सत्तामात्राच्चेत् सर्वैश्वर्यम् ।।साङ्ख्यदर्शनम् ५।९।।

'पारिभाषिक' कहने से आपका अर्थ था कि ईश्वर की केवल सत्ता होती है, वस्तुतः वह कुछ करता नहीं है । यदि सत्ता होने से ही ईश्वरता हो जाए, तो सभी वस्तुओं में हम ऐश्वर्य मान लें ।

क्योंकि यह किसी को भी मान्य नहीं है, इसलिए दिया 'हेतु' हेत्वाभास है । कौन सा हेत्वाभास? सो, देखिए हम निकले थे जानने के लिए कि ईश्वर का ईश्वरत्व क्या है? वह क्या कारण है जिससे हम ईश्वर को ईश्वर मानते हैं? तो, जब उस कारण को त्याग कर, उसे परिभाषा से ही ईश्वर कह दिया, तो वह प्रकरण में जिसकी चिन्ता की जा रही है, उसी को निर्णय बनाने के तुल्य है । इसलिए **५।५ प्रकरणसम हेत्वाभास है ।**

अब पूर्वपक्षी ईश्वर को ही त्यागना चाहता है–

प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धिः ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।१०॥

वह कहता है कि ईश्वर प्रत्यक्ष प्रमाण से उपलब्ध न होने के कारण, वह सिद्ध नहीं है ।

सम्बन्धभावान्नानुमानम् ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।११॥

सर्वतन्त्र सिद्धान्त कि ईश्वर का प्रकृति से सम्बन्ध नहीं होता से ईश्वर को अनुमान से भी सिद्ध नहीं किया जा सकता ।

श्रुतिरपि प्रधानकार्यत्वस्य ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।१२॥

शब्द प्रमाण वेद भी प्रधान से कार्यों के उत्पन्न होने को कहते हैं । फिर वहां भी परमात्मा नहीं है । तो फिर उसकी आवश्यकता भी नहीं है ।

इस प्रकार, तीनों प्रमाणों से सिद्ध न होने के कारण हम उसकी सत्ता को ही क्यों मानें?

सिद्धहस्त कपिल इन कठिन तर्कों का भी दक्षता से उत्तर देते हैं ! **५।१० का–**

नाविद्याशक्तियोगो निःसङ्गस्य ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।१३॥

जो निःसंग है (जो तथ्य आपको भी मान्य है), उसका अविद्या की शक्ति (प्रकृति) से योग नहीं हो सकता । इसलिए हां, परमात्मा का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है, क्योंकि इन्द्रियां केवल प्रकृति के कार्यों को ही देख सकती हैं । इस उत्तर से, और सीधे भी, हम ऊहा कर पाते हैं कि ५।१० में जो कहा गया, वह तो ज्ञात ही था – ईश्वर आंखों से नहीं दीख रहा था, तभी तो उसकी सत्ता पर चर्चा हो रही है । इसलिए **५।१० का यह तर्क साध्यसम हेत्वाभास है ।**

५।११ के लिए कपिल कहते हैं –

तद्योगे तत्सिद्धावन्योऽन्याश्रयत्वम् ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।१४॥

यदि प्रकृति के सम्बन्ध से, अनुमान प्रमाण द्वारा, परमात्मा की सिद्धि, उसकी सत्ता मानी जाए, तो वह अपनी सिद्धि के लिए प्रकृति पर आश्रित हो जाएगा । परन्तु प्रकृति तो अपनी सिद्धि, अपने कार्यों की उत्पत्ति के लिए परमात्मा की अपेक्षा रखती है । यह अन्योऽन्याश्रय दोष होने से हेत्वाभास है । कौन-सा हेत्वाभास ? इसके लिए देखिए, दिया हुआ तर्क दूसरी ओर से देखे जाने पर सही नहीं बैठता, उससे उत्पन्न निष्कर्ष पूर्ण नहीं है । इसलिए **५।११ अनैकान्तिक है, और सव्यभिचार हेत्वाभास है ।**

५।१२ का प्रत्युत्तर तो बहुत ही विद्वत्तापूर्ण है–

न बीजाङ्कुरवत् सादिसंसारश्रुतेः ॥साङ्ख्यदर्शनम् ५।१५॥

(शेष पृष्ठ १३ पर)

सन्देशखाली का राक्षस कौन ?

–राजीव चौधरी (मो०–९५४००२९०४४)

मन में सवाल है और सवाल इस कारण है कि आखिर कैसे इस भारत में एक मामूली सा गुंडा सत्ता की सह पर इतना ताकतवर बन जाता है कि तंत्र की धज्जियां उड़ाने लगता है! वो तंत्र को पैरों तले की जूती समझने लगता है और तंत्र भी उसके सामने इतना बोना हो जाता है कि वो गण की फरियाद ही नहीं सुनता।

हम बचपन में सुनते थे कि एक राक्षस था वो हर रोज गाँव से एक आदमी को खाता था। उसके आगे सब बेबस थे। लेकिन तब लगता था ये सिर्फ कहानियों में होता है असल में ऐसा कुछ नहीं। पर पश्चिम बंगाल के संदेशखाली का किस्सा सुना तो लगा कि राक्षस अभी भी हैं। अब वो जंगल या गुफा में नहीं रहते वो लोगों के बीच हैं और कई तो राजनितिक दलों के नेता भी हैं। और उस राक्षस की पार्टी के गुंडे घर-घर जाते हैं। वहां कोई खूबसूरत महिला दिखती है या फिर कम उम्र की कोई सुंदर लड़की दिखती है तो वो गुंडे उन महिलाओं-लड़कियों को पकड़कर पार्टी के ऑफिस लेकर जाते हैं। वो उन महिलाओं को कई-कई रात तक पार्टी ऑफिस में ही जबरन रखते हैं, उनका रेप करते हैं और जब मन भर जाता है तो उन्हें वापस छोड़ जाते हैं।

ये आज का हिंदुस्तान है। ये आज का बंगाल है। इतना सुनकर आपके मन में भी आया होगा कि आखिर अब तक वो महिलाएं वो बच्चियां मौन क्यों थीं वो चुप क्यों थीं? तो उनकी मजबूरी को भी समझिये। राक्षस का नाम है शाहजहां शेख। पश्चिम बंगाल में ममता बनर्जी की पार्टी का छोटा सा नेता है। २४ परगना जिला मुख्यालय से करीब ७४ किलोमीटर दूर संदेशखाली में रहता है। बंगाल से बाहर ये नाम ५ जनवरी तक अनजान था। लेकिन कहानी ५ जनवरी की है जब ई०डी० की टीम ने इसी शाहजहां शेख के घर रेड की थी। टी०एम०सी० से जिला पंचायत सदस्य बने शाहजहां शेख के खिलाफ ई०डी० ने ये रेड करोड़ों रुपये के राशन घोटाले को लेकर की थी। तब शाहजहां शेख के लोगों ने ई०डी० की टीम को गांव में घुसने से रोक दिया। उस समय ई०डी० की टीम पर हमला भी हुआ और शाहजहां शेख के लोगों ने ई०डी० की टीम को तब तक उलझाए रखा, जब तक कि शाहजहां शेख फरार नहीं हो गया।

ई०डी० की टीम को भी खाली हाथ वापस लौटना पड़ा और तब संदेशखाली की महिलाएं सामने आने लगीं। उन्होंने दावा किया कि शाहजहां शेख का संदेशखाली में इतना दबदबा रहा है कि उसने कई साल से महिलाओं की जमीन पर जबरदस्ती कब्जा कर रखा है। शाहजहां शेख के गुंडे उन महिलाओं का यौन उत्पीड़न भी करते हैं।

सवाल बना कि आखिर शाहजहां शेख इतना ताकतवर कैसे बना? तो ये कहानी भी सुन लीजिये पर ये कहानी फिल्मी नहीं है। ना इसके नाम और पात्र काल्पनिक है। ये कहानी जीवित घटनाओं से मेल भी खाती है। दरअसल बंगाल के सन्देशखाली में रहने वाला शाहजहां शेख ईंट भट्टे पर मजदूरी किया करता था। वहां से निकला मछली पालन करने वाला एक मछुआरा बन गया। कुछ अन्य मजदूरों से सम्पर्क साधने लगा छुटभैया नेताओं की जी हजुरी करने लगा। राज्य में बुद्धदेव भट्टाचार्य की सरकार थी। कम्युनिज्म का ढोल

पीटा जा रहा था, गरीब को अमीर में बदलने के नारे दीवारों पर लिखे थे। हर मजदूर के हाथ में ताकत देने के जुमले थे तो समाजवाद लाने की होड़ मची थी। इसी होड़ में शामिल हुआ शाहजहां शेख जिसने मजदूरी करते हुए एक यूनियन नेता के तौर पर राजनीति में कदम रखा। कारण उसका मामा मोस्लेम शेख कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया-मार्क्सवादी के नेता और पंचायत प्रमुख थे। साल था २००४ शाहजहां शेख मामा के साथ जुड़ गया वह छह सालों तक अपने मामा के शागिर्दी में आगे बढ़ा। साल आ गया २०१० सिंगूर और नंदीग्राम में जमीन अधिग्रहण विरोधी आंदोलनों ने ममता बनर्जी की पार्टी तृणमूल कांग्रेस के सत्ता में पहुंचने का रास्ता साफ कर दिया था। यानि राज्य की राजनीति की हवा बदल चुकी थी। इस बदलती हवा की गंध को भांपकर शाहजहां शेख टी०एम०सी० राष्ट्रीय महासचिव मुकुल रॉय और उत्तर २४ परगना टी०एम०सी० जिला अध्यक्ष ज्योतिप्रियो मलिक की जी हजुरी में लग गया। जब ममता पहली बार बंगाल की मुख्यमंत्री बनी तो ज्योतिप्रियो मलिक को मंत्री बनाया गया, तो शाहजहां शेख की ताकत और बढ़ गई।

इसके बाद टी०एम०सी० के बैनर तले शाहजहां शेख ने अपनी ताकत में इजाफा किया। धीरे-धीरे संपत्ति अर्जित करके क्षेत्र में खुद की छवि एक रॉबिनहुड की बना ली। क्षेत्र में कुछ लोगों के लिए वह मसीहा बन गया तो वहीं कुछ लोगों के लिए खलनायक। यानि देखते देखते एक मजदूर और मछुआरा रहा शाहजहां शेख बड़ी संपत्ति का मालिक बन गया। उसके पास १७ कारें हैं, इसके अलावा उसके पास ४३ बीघा जमीन और दो करोड़ रुपये से अधिक के गहने हैं, उसके बैंक खातों में करीब दो करोड़ रुपये भी जमा हैं। यह सब ब्योरा वो है जो चुनाव में दिखाया जाता है बाकि उसने मजदूरो के भले के नाम पर कितना लूटा होगा आप खुद समझ सकते हैं?

यही वजह रही कि २०११ से २०२४ तक महिलाएं क्षेत्र में शाहजहां शेख के आतंक को सहती रही, लेकिन वे बोल नहीं पाईं। जहाँ जो लड़की दिखी उठा ली जहाँ जो महिला दिखी उठवा ली गयी। थाने चौकी पुलिस दरबार सब खामोश। बताया तो ये जा रहा है कि अगर कोई पीड़ित थाने चली भी जाती तो अगले रोज उसके पति या भाई को उल्टा झूठे केस में फंसा दिया जाता। जिसके बदले पीड़िता पर केस वापिस लेने का दबाव बनाया जाता या फैसला करा लिया जाता।

ऐसे में सवाल उठता है कि जब संदेशखाली की महिलाओं के साथ लंबे वक्त से ऐसा अत्याचार हो रहा था, तो उन्होंने पहले आवाज क्यों नहीं उठाई? इस पर महिलाओं ने कहा, "ई०डी० की छापेमारी के बाद जब शाहजहां शेख और उसके आदमी संदेशखाली छोड़कर फरार हो गए, तब हमें बोलने की हिम्मत मिली और अब हमने अपने मुंह बांधकर अपने खिलाफ हुई ज्यादती को मीडिया में बयान किया है।"

शाहजहाँ शेख की ताकत समझिये या गुंडई कि राज्य महिला आयोग भी अब सामने आया जब शाहजहाँ फरार हो गया। अब महिला आयोग बता रहा है कि जब महिलाएं शाहजहां शेख और उसके सहयोगगियों के खिलाफ आवाज उठाती थीं तब बंगाल पुलिस उनके परिवार को परेशान करती थी। आयोग के अनुसार, शाहजहां शेख के इशारे पर ही कथित तौर पर पुलिस पीड़िताओं के पतियों को झूठे केस में गिरफ्तार करती रही। टी० एम०सी० का प्रशासन भी नौकरी करने वाले लोगों को ट्रांसफर कराने की धमकी देता रहा।

अब संदेशखाली की महिलाओं ने शाहजहां

(शेष पृष्ठ २७ पर)

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज ने मुझे पूज्य बनाया !

–राजेशार्य आट्टा पानीपत–१३२१२२, (मो०: ०९९९१२९१३१८)

वैदिक विद्वान स्वामी वेदानन्द जी ने स्वामी स्वतंत्रानन्द जी की सहायता से एक लेख लिखा था–दलित हितैषी दीनबन्धु स्वामी अनुभूतानन्द। उसके आधार पर प्राचार्य अभय आर्य ने बताया कि स्वामी अनुभूतानन्द का जन्म मानसा (पटियाला–पंजाब) के वाल्मीकि परिवार में हुआ था। एक बार ये अपने चाचा से मिलने हिसार गये। वहाँ इन्हें महाशय कृष्णचन्द्र (पूर्व नाम–मुंशी काले खाँ) मिले। उन्होंने इन्हें पढने की प्रेरणा दी। ये बोले–मुझे कौन पढ़ाएगा। महाशय जी ने कहा–मैं पढाऊँगा। महाशय जी ने इन्हें संस्कृत पढाई। इसके बाद दातारपुर (होशियारपुर) में वैरागियों के मन्दिर में संस्कृत पाठशाला में पढ़े। वहाँ किसी ने कहा–यहाँ आर्य समाजियों ने जोर लगा लिया आर्य समाज नहीं बना। स्वामी अनुभूतानन्द बोले–'किसी आर्य ने संकल्प नहीं लिया होगा। मैं इसका संकल्प लेता हूँ।'

यह कहकर बरसाती नदी पर तप करने बैठ गये। कई दिनों के बाद लोगों ने स्वामी जी से इच्छा पूछी। स्वामी जी ने अपना संकल्प बताया, तो किसी राजपूत भाई ने आर्य समाज के लिए भूमि दान दे दी। वहाँ आर्य समाज बनाया।

एक बार स्वामी जी गढनिवाला में गये। लोग इन्हें गाली देने लगे। स्वामी जी वहाँ बैठकर गीता पाठ करने लगे। किसी ने इच्छा पूछी, तो कहा–आर्यसमाज बनाना है। लोगों ने श्रद्धा दिखाई और आर्य समाज बन गया। इसी तरह स्वामी जी ने आदमपुर दबाबा में आर्यसमाज का कुंआ बनवाया। अनेक दलित बालकों को बी.ए., एम.ए., मैट्रिक आदि करवाई, वैद्यक की शिक्षा दिलवाई। स्वामी जी बिना व्याख्यान ही प्रेरणा देते थे। यह आर्य समाज के कारण ही सम्भव हो सका कि अछूत माने जाने वाले परिवार में जन्म लेकर कोई युवक संस्कृत ही नहीं पढ सका, अपितु समाज का पूज्य संन्यासी बन अपने जीवन के साथ दूसरों के जीवन का भी उत्थान कर गया।

आर्य समाज के प्रचार के लिए समर्पित ऐसे ही एक और संन्यासी थे स्वामी बेधड़क जी। पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री प्रताप सिंह कैरों ने उन्हें हरियाणा क्षेत्र से विधान सभा की रिजर्व सीट पर चुनाव लड़ने के लिए कहा, तो स्वामी जी ने उसे ठुकराते हुए कहा–"मैं संन्यासी हूँ। चुनाव तथा दलगत राजनीति मेरे लिए वर्जित है। ऋषि दयानन्द ने तो मुझे दलित से ब्राह्मण तथा संन्यासी तक बना दिया। आर्य समाज ने मुझे ऊँचा मान देकर पूज्य बनाया है और आप मुझे जात–पात के पचड़े में फिर डालना चाहते हैं।"

आर्य समाज के इतिहास–पुरुष श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी से एक घटना सुनी–१९५४ ई० में स्वामी बेधड़क जी कादियाँ (पंजाब) में प्रचारार्थ गये थे। उन्हें सुनने के लिए इतनी भीड़ जमा हो गई कि वह स्थान छोटा पड़ गया। एक घोर पौराणिक दुकानदार भी 'समय बिताने के लिए' बाहर खड़ा होकर सुनने लगा। वह इतना प्रभावित हुआ कि कार्यक्रम के बाद उसने स्वामी बेधड़क जी को पैर छूकर नमस्ते की व उन्हें अपने घर पर भोजन का निमन्त्रण दिया।

स्वामी जी जब उसके घर गये, तो उन्होंने

स्वामी जी के पैर धोए।, जब उसकी पत्नी पैर धोने लगी, तो स्वामी जी बोले–हम आर्य संन्यासी किसी महिला को अपने पाँव छूने की अनुमति नहीं देते। यह धर्म–विरुद्ध कर्म है। आपने नमस्ते कर दी, सत्कार हो गया। स्त्री को पर पुरुष के चरण–स्पर्श कदापि नहीं करने चाहिए। केवल पति व सास–ससुर के चरण–स्पर्श करना ही विहित है। आर्य मर्यादा यही है।

यह सुनकर उस दुकानदार की श्रद्धा दोगुनी हो गई। पहली बार किसी महात्मा ने ऐसा सत्य उपदेश दिया था। उन्होंने स्वामी जी को श्रद्धा से भोजन करवाया व दक्षिणा दी। रात्रि–प्रचार में स्वामी जी ने कहा–मैं तो एक धानक कुल में जन्मा व्यक्ति हूँ। गीदड़ मारा करता था। ऋषि दयानन्द की और आर्य समाज की कृपा से आज देश भर में वेद–प्रचार के लिए भ्रमण करता हूँ। लोग पूरा–पूरा मान–सम्मान देते हैं।"

पहले आर्य समाज सिरसा में एक दलित युवक सेवक के रूप में काम करता था। उसकी गाने की अच्छी कला थी। एक बार स्वामी स्वतंत्रानन्द जी वहाँ आये, तो युवक ने यशवन्तसिंह टोहानवी (आर्य संगीत रामायण आदि नाटकों के लेखक) के ईश्वर–भक्ति व आर्य समाज से सम्बन्धित भजन सुनाये। स्वामी जी ने इन्हें विस्तृत क्षेत्र में आकर धर्म प्रचार करने के लिए प्रोत्साहित किया। यही युवक बाद में स्वामी बेधड़क बना। बाद में इन्होंने उत्तर प्रदेश से लेकर बिलोचिस्तान तक वैदिक धर्म का प्रचार किया। देश के स्वतंत्रता संग्राम में वे आठ बार जेल गये। आर्य समाज के हैदराबाद सत्याग्रह (१९३९ ई.) तथा अन्य आन्दोलनों में भी जेल गये। संन्यासी बनने के बाद तो उन्होंने दक्षिण तक प्रचार किया। रिजर्व सीट (विधायक) के टिकट को ठुकराना इनके आर्य समाज के प्रति समर्पण भाव को दर्शाता है। क्या ऐसा कृतज्ञ भाव हममें नहीं हो सकता !

चमकता है तेज तेरा,
दयानन्द मेरे चेहरे में ।
मुझे कौन पूछने वाला था,
इस घोर अन्धेरे में ॥

स्वामी श्रद्धानन्द दलितोद्धार के प्रसंग में दिल्ली से रोहतक के गाँवों में घूमते समय, जब बालन्द गाँव में पहुँचे, तो उन्होंने वहाँ सभी जातियों के लोगों को इकट्ठा करके हवन किया व जनेऊ दिये। तब शिवदत्त नाम के एक चमार ने, भी जनेऊ लिया व स्वामी जी से इसके नियम पूछे। स्वामी जी ने कहा कि हुक्का नहीं पीना, शराब नहीं पीनी, मांस नहीं खाना, व संध्या–हवन करना। जूते बनाने वाले व्यक्ति ने हिन्दी सीखी और आर्यसमाज के ग्रन्थ पढ़े। फिर संकल्प लिया कि मैं अपने एक बेटे को वेदों का विद्वान बनाऊँगा।

एक दिन आर्य समाज के प्रचार में शिवदत्त आर्य अपने बच्चों के साथ पहुँचे। स्वामी नित्यानन्द जी ने इनके एक होनहार बच्चे को देखकर कहा कि इस लड़के को गुरुकुल झज्जर में पढ़ाओ। इन्होंने स्वीकार कर लिया और कहा कि महाराज, आप इस लड़के को गुरुकुल में दाखिल करवा दो।

स्वामी नित्यानन्द लड़के को गुरुकुल झज्जर में, (१९४७ ई.) आचार्य भगवान देव (स्वामी ओमानन्द) जी के पास ले गये। आचार्य जी ने उसे अपना शिष्य बनाकर सुदर्शन देव नाम रखा। गुरुओं के आशीर्वाद और अपने परिश्रम के बल पर ब्रह्मचारी सुदर्शनदेव व्याकरण (संस्कृत) व वेद–वेदांगों का अध्ययन कर पण्डित सुदर्शनदेव आचार्य कहलाये। विभिन्न गुरुकुलों में आचार्य पद पर रहे। १९७८ ई. में पी.एच.डी. कर डॉक्टर बने। महर्षि दयानन्द के वेद भाष्य को सरल बनाने के लिए दयानन्द यजुर्वेद भाष्य–भास्कर (४ खण्ड), दयानन्द ऋग्वेदभाष्य– भास्कर (२ खण्ड), वेदभाष्य–विबोध आदि ग्रन्थ लिखे। १९९५ में

सेवानिवृत्ति के बाद तो अपना सारा समय वैदिक धर्म की सेवा में लगाते रहे। इसी कारण आर्यसमाज सान्ताक्रूज मुम्बई ने २८ जनवरी १९९६ को डॉ० सुदर्शन देव आचार्य को 'वेद-वेदाङ्ग पुरस्कार' से सम्मानित किया।

मात्र पाँच-सात साल में ही सम्पूर्ण हिन्दू समाज से छुआछूत भगाने की शर्त पर ही हिन्दू बने रहने वाले लोग समाज में इतना बड़ा परिवर्तन नहीं ला सकते। इसके लिए तो धैर्य पूर्वक साधना करनी पड़ती है। महर्षि मनु को गाली देना व मनुस्मृति जलाना कोई वीरता का काम नहीं है, वीरता का काम है मनु के **'शूद्रोब्राह्मणतामेति'** (शूद्र ब्राह्मण बन सकता है) को धरातल पर उतारना और उसे करके दिखाया है ऋषि दयानन्द के आर्यसमाज ने ।

मेरे दलित बन्धुओं! मैं तुम्हारे उन महान पूर्वजों को सादर प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने अज्ञानी व अभिमानी स्वधर्मियों से वर्षों अपमान झेलकर भी ऋषियों का प्यारा धर्म (सनातन) नहीं छोड़ा। पर क्या तुम्हें याद है कि तुम्हारे उद्धार के लिए ऋषि दयानन्द व पं० चिरंजीव लाल ने क्रूर मतान्धों के हाथों विषपान कर, पं० लेखराम, महाशय रामचन्द्र, स्वामी श्रद्धानन्द, भक्त फूलसिंह आदि ने छुरे, लाठी व गोलियाँ खाकर अपना बलिदान दिया था, मास्टर आत्माराम अमृतसरी जैसे अनेक आर्यवीरों ने वर्षों जातीय बहिष्कार झेला था; कर्मचन्द वकील (जम्मू) का तो जीवन भर के लिए घर ही छूट गया था। आज दलितों के नाम की राजनीति करने वाले नेता क्या इन बलिदानियों, के प्रति कृतज्ञता के दो शब्द बोलेंगे अथवा बात-बात पर धर्म परिवर्तन करने की धमकियाँ ही देते रहेंगे ? ❑❑

(नोट- पाठकों से निवेदन है कि लेखक की पुस्तक 'दलितोद्धार की आड़ में' का अधिक से अधिक प्रचार करने में सहयोग करें। सम्पर्क करें-श्री दिनेश कुमार शास्त्री मो. नं. ९६५०५२२७७८)

(पृष्ठ ८ का शेष) सांख्यदर्शन में हेत्वाभास

अर्थात् प्रकृति का कार्यत्व बीज और अंकुर के समान नहीं है, क्योंकि श्रुति हमें संसार का आदि होना बताती है । यहां तात्पर्य इस प्रकार है – बीज से अंकुर और अंकुर से उत्पन्न पेड़ से बीज परिधि यह चक्र बिना आदि-अन्त के है (जबकि यहां भी एक आदि होता है, परन्तु उपमा में उसका ग्रहण नहीं किया गया है) । दूसरी ओर संसार के प्रारम्भ से पूर्व प्रकृति साम्यावस्था में थी, उसको कार्यों में परिवर्तित होने का कोई कारण नहीं था । फिर, सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर के रूप में वह निमित्त कारण प्रस्तुत हुआ और उसने कार्यों की शृंखला प्रारम्भ की । इसलिए ईश्वर-रूप निमित्त कारण का भी वर्णन वेदों से प्राप्त होता है । ५।१२ में संसार के प्रारम्भिक काल की चर्चा न करने से, उसमें काल का अतिक्रमण हुआ है । इसलिए ५।१२ कालातीत हेत्वाभास है ।

उपर्युक्त प्रकार से हम पाते हैं कि सांख्य के छोटे-से भाग में ही पांचों प्रकार के हेत्वाभास हमें प्राप्त हो गए । प्राप्त ही नहीं हुए, उनके अर्थ भी स्पष्ट हो गए । इसी प्रकार न्यायदर्शन के अन्य अंशों को समझने के लिए भी सांख्य का अध्ययन बहुत लाभकर है । यही नहीं, कपिल के द्वारा प्रस्तुत हेतु भी बहुत ही अद्भुत हैं ! कठिन विषय के लिए अवश्य ही कठिन हेतु अपेक्षित हैं । ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति के स्वरूप व सम्बन्ध की चिन्ता निश्चित रूप से अत्यधिक गहन है । इसीलिए ये विषय आज भी तर्क की परिधि से बाहर माने जाते हैं । यह इसलिए भी कि सांख्यदर्शन को बहुत कम जानते हैं ! ❑❑

वो निडर संन्यासी जिसने अंग्रेज सरकार की नींव हिला दी थी

–दिनेश कु० शास्त्री (मो०–९६५०५२२७७८)

आज से सौ वर्ष पूर्व के भारत की अगर कल्पना करें तो उसे राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक उथल-पुथल का युग भी कह सकते हैं। देश पर विदेशी शासन था और भारतीय नागरिक गुलामी की जिन्दगी जीने को मजबूर थे। हालाँकि देश में जगह-जगह क्रांति के अंकुर फूट चुके थे पर अंग्रेजी सरकार उन अंकुरों को अपने विदेशी बूटों से कुचल रही थी। ऐसे माहौल में एक अंग्रेज अधिकारी जिनका नाम था सर सिडनी रौलेट उसकी अध्यक्षता वाली सेडिशन समिति की सिफारिश के आधार पर काला कानून रॉलेट ऐक्ट बनाया गया। यह कानून देश में स्वतंत्रता के लिए उभरते स्वर को दबाने के लिए था। इसके अनुसार अंग्रेजी सरकार को यह अधिकार प्राप्त हो गया था कि वह किसी भी भारतीय पर अदालत में बिना मुकदमा चलाए उसे जेल में बंद कर जो चाहे जुल्म कर सकती थी। इस कानून के तहत अपराधी को उसके खिलाफ मुकदमा दर्ज करने वाले का नाम जानने का अधिकार भी समाप्त कर दिया गया था। यूँ तो इस कानून के विरोध में देशव्यापी हड़तालें, जूलूस और प्रदर्शन होने लगे। इस आन्दोलन के एक सिपाही का नाम था स्वामी श्रदानन्द जो गुलामी के घनघोर अँधेरे में आजादी का पथ खोजने के लिए महर्षि दयानन्द से प्रेरणा लेकर आजादी की मशाल लेकर चल निकला था।

३० मार्च १९१९ ई० के दिन रौलट एक्ट के विरोध में आन्दोलन शुरु हुए। दिल्ली में इस सत्याग्रही सेना के प्रथम सैनिक और मार्गदर्शक स्वामी श्रद्धानन्द ही थे। सब यातायात बन्द हो गये। स्वयंसेवक पुलिस द्वारा पकड़ लिए गए। भीड़ ने साथियों की रिहाई के लिए प्रार्थना की तो पुलिस ने गोलियां चला दीं। सांयकाल के समय बीस पच्चीस हजार की अपार भीड़ एक कतार में भारत माता की जय के नारे लगाती हुई घंटाघर की ओर स्वामी जी के नेतृत्व में चल पड़ी। अचानक कम्पनी बाग के गोरखा फौज के किसी सैनिक ने गोली चला दी जनता क्रोधित हो गई। लोगों को वहीं खड़े रहने का आदेश देकर स्वामी जी आगे जा खड़े हुए और धीर गम्भीर वाणी में पूछा–तुमने गोली क्यों चलाई? सैनिकों ने संगीनें आगे बढ़ाते हुए कहा–हट जाओ। नहीं तो हम तुम्हें छेद देंगे। स्वामी जी एक कदम और आगे बढ़ गए अब संगीन की नोंक स्वामी जी की छाती को छू रही थी। स्वामी जी शेर की भांति गरजते हुए बोले– "मेरी छाती खुली है हिम्मत है तो चलाओ गोली।" अंग्रेज अधिकारी के आदेश से सैनिकों ने अपनी संगीनें झुका लीं और जूलूस फिर चल पड़ा।

इस घटना के बाद सब ओर उत्साह का वातावरण बना। ४ अप्रैल को दोपहर बाद मौलाना अब्दुल्ला चूड़ी वाले ने ऊँची आवाज में कहा कि स्वामी श्रद्धानन्द की तकरीर (भाषण) होनी चाहिए। कुछ नौजवान स्वामी जी को उनके नया बाजार स्थित मकान से ले आए। स्वामी जी मस्जिद के मिम्बर पर खड़े हुए। उन्होंने ऋग्वेद के मन्त्र–**त्वं हि नः पिता.....** से अपना भाषण प्रारम्भ किया। भारत ही नहीं इस्लाम के इतिहास में यह प्रथम घटना थी कि किसी गैर मुस्लिम ने मस्जिद के मिम्बर से भाषण किया हो !

होनी को कुछ और मंजूर था १३ अप्रैल

आते-आते भारत के पंजाब प्रान्त के अमृतसर में स्वर्ण मन्दिर के निकट जलियाँवाला बाग में १३ अप्रैल १९१९ को बैसाखी के दिन रौलेट एक्ट का विरोध करने के लिए एक सभा हो रही थी। जिसमें जनरल डायर नामक एक अंग्रेज अफसर ने अकारण उस सभा में उपस्थित भीड़ पर गोलियाँ चलवा दी थीं जिसमें असंख्य लोग शहीद हुए इस घटना के बाद स्वामी श्रद्धानन्द जी ने दिल्ली में आसन जमाया। कालान्तर में पंजाब सरकार स्वामी जी को गिरफ्तार करना चाहती थी। अमृतसर में अकालियों ने गुरु का बाग में सरकार से मोर्चा ले रखा था। स्वामी जी अमृतसर पहुँच गए। स्वर्ण मन्दिर में पहुँचकर अकाल तख्त पर एक ओजस्वी भाषण दिया गुरु का बाग में पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर १ वर्ष ४ मास की जेल की सजा दे दी। लेकिन बाद में १५ दिन में ही रिहा कर दिया गया। इसके बाद मानों स्वामी जी क्रांति की एक ऐसी मशाल बन गये जिससे सोये भारत के युवाओं का रक्त अग्नि बनकर धधकने लगा। माना जाता है कि यह घटना ही भारत में ब्रिटिश शासन के अंत की शुरुआत बनी और देश को अंग्रेजी शासन से मुक्ति मिली। रोलेक्ट एक्ट का विरोध हो या भारत में लार्ड मैकाले द्वारा बनाई गयी अंग्रेजी माध्यम की पश्चिमी शिक्षा नीति के स्थान पर राष्ट्रीय विकल्प के रूप में राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से वैदिक साहित्य, भारतीय दर्शन, भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के साथ-साथ आधुनिक विषयों की उच्च शिक्षा के अध्ययन- अध्यापन तथा अनुसंधान के लिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय स्थापित करने वाले स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन चरित्र मात्र कुछ शब्दों में कैसे पिरोया जा सकता। जब महान् सिद्धान्तों पर आधारित सांस्कृतिक एव राजनितिक धरातल पर उन्हें कोई पराजित नहीं कर सका तो २३ दिसंबर १९२६ को एक धर्मांध मुस्लिम युवक अब्दुल रशीद ने उन्हें गोली मारकर हत्या कर दी। स्वामी श्रद्धानन्द का अमर बलिदान युगों-युगों तक देश पर मर-मिटने की प्रेरणा देता रहेगा। उन्हें शत्-शत् नमन। ❑❑

ब्रह्मचर्य

ऋषि दयानन्द ब्रह्मचर्य की मर्यादा का कितना ध्यान रखते थे, उसका कुछ अनुमान इस घटना से किया जा सकता है कि एक दिन जब वे मथुरा में यमुनातट के विश्रांत घाट पर समाधिस्थ थे, उस समय एक देवी ने श्रद्धा से अपना सिर उनके पाँव पर रख दिया तब उन्होंने प्रायश्चित रूप में ३ दिन का उपवास रखा था।

(पृष्ठ २ का शेष) **वेदोपदेश**

की निन्दा सुनूँ? असम्भव। वह बड़ा दाता है और बहुत देना चाहता है–

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर । भूरि घेदिन्द्र दित्ससि ॥
भूरिदा ह्यसि श्रुतः । –ऋ० ४।३२।२०-२१

हे बड़े दानी। हमें बहुत दे, थोड़ा मत दे, बहुत ला । हे इन्द्र! तू बहुत देना चाहता है, क्योंकि तू महादानी = बहुत देनेवाला प्रसिद्ध है ।

भगवान् के दान हैं भी भले–**भद्रा इन्द्रस्य रातयः।**[१] भगवान् के भले दान की निन्दा कौन करे!

१. ऋ० १।१३२।२

॥ ओ३म् ॥

मनुष्य की सार्थकता मननशील होने और सत्याचरण करने में है !

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून (मो० : ०९४१२९८५१२१)

मनुष्य किसे कहते हैं? इसका सबसे युक्तियुक्त एवं यथार्थ उत्तर ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के स्वमन्वयामन्तव्य प्रकरण में दिया है। मनुष्य की परिभाषा एवं उसके मुख्य कर्तव्य का उद्घोष करते हुए वह लिखते हैं–'मनुष्य उसी को कहना (अर्थात् मनुष्य वही होता है जो) मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख–दुःख और हानि–लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं कि चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उन की रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी (मानवता, सत्य–सिद्धान्तों, देश, समाज व हितकारी प्राणियों के हितों के विरुद्ध आचरण करने वाला) चाहे चक्रवर्ती सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उस का नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उस को (मनुष्य नामी प्राणी को) कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।'

सभी मनुष्य मननशील होते हैं अथवा नहीं, इसका उत्तर है कि संसार में बहुत कम मनुष्य ही मननशील होते हैं। मनन करने के लिये अनेक विषय होते हैं। प्रथम विषय तो स्वयं को जानना है। इस संबंध में विचार करते हैं तो हम पाते हैं कि संसार में अधिकांश या सभी लोग स्वयं को नहीं जानते। वह बहुत सी बातें, ज्ञान व विज्ञान तथा इतिहास आदि को जानते हैं परन्तु वह स्वयं कौन हैं, क्या हैं, कहां से आये हैं, मरने के बाद कहां जायेंगे, क्या मृत्यु होने पर उनका अस्तित्व नष्ट हो जायेगा या रहेगा, मृत्यु के बाद पुनर्जन्म होता है अथवा नहीं होता, होता है तो इसका आधार व कारण क्या होता है, आत्मा अनादि है या उत्पत्तिधर्मा है, यह अमर और अविनाशी है या मरणधर्मा और नाशवान, ऐसे अनेक प्रश्न हैं जिनको ९५ प्रतिशत से अधिक लोग न तो जानते हैं और न जानने का प्रयास करते हैं। उनके मत, पन्थ व सम्प्रदायों के आचार्य अपने अनुयायियों को जो अविद्यायुक्त बातें बता देते हैं, वह उसी को मानते व उसके अनुसार ही आचरण करते हैं। इसी प्रकार हमारे सम्मुख सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि हमारे शरीर को किसने व क्यों बनाया, इस संसार की उत्पत्ति का निमित्तकारण अर्थात् सृष्टि का कर्ता कौन है?, है भी अथवा नहीं, है तो कैसे और नहीं है तो क्यों नहीं है, ईश्वर में ज्ञान व कर्म स्वाभाविक हैं व नैमित्तिक हैं? ईश्वर सृष्टि किस पदार्थ से कैसे बनाता है। इन प्रश्नों पर भी मनुष्य को विचार करना चाहिये और इन सभी प्रश्नों के सत्य एवं यथार्थ उत्तर ढूंढने चाहियें। अध्ययन व अनुभव से यह ज्ञान होता है कि इन प्रश्नों का उत्तर न तो वैज्ञानिकों के पास

है, न ही सभी ज्ञानियों के पास और न ही सभी मत-मतान्तरों व उनके आचार्यों के पास हैं। उनकी धर्म पुस्तकें इन प्रश्नों का समाधान नहीं करतीं। इसका कारण यह है कि वेद के अतिरिक्त संसार के सब ग्रन्थ अल्पज्ञ जीवों की रचनायें हैं। अल्पज्ञ जीव व मनुष्य की कृति व रचना अपूर्ण होती है। उसमें अनेक न्यूनतायें होती हैं। आधुनिक विज्ञान बहुत आगे जा चुका है परन्तु आज से सौ-दो सौ वर्ष पूर्व उसके अपने सिद्धान्त व मान्यतायें भी अपूर्ण व भ्रमयुक्त थे। वैज्ञानिकों द्वारा प्रकृति में घटने वाले सत्य व असत्य नियमों का कई शताब्दियों से चिन्तन व मनन होता रहा जिसका परिणाम आधुनिक विज्ञान की मान्यतायें हैं। इसी आधार पर विज्ञान के नियमों का उपयोग कर अनेक उपयोगी यन्त्रों का निर्माण किया गया है। इन यन्त्रों से सारा संसार सुख व सुविधा अनुभव करता है। मनुष्य के शरीर में बुद्धि नामक एक करण भी है। परमात्मा ने मनुष्य को यह बुद्धि मनन करने के लिये ही दी है। उसका विकास व उन्नति होनी चाहिये। वर्तमान समय में मनुष्य मत-मतान्तरों की अविद्या व बन्धनों में फंसा हुआ है। सद्विद्या प्राप्ति में सरकारी व्यवस्थायें भी अनुकूल व सहयोगी नहीं हैं। इस विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। आजकल की शिक्षा में विद्या की मात्र बहुत अल्प है। इसका अधिकांश भाग अविद्या से ग्रस्त है। आधुनिक ज्ञान विज्ञान में ईश्वर, जीवात्मा एवं इस सृष्टि के उपादान कारण प्रकृति पर भली प्रकार से ठीक-ठीक प्रकाश नहीं पड़ता। इन विषयों पर संसार में भ्रम व्याप्त है जिसके निवारण के लिये प्रयास होते नहीं दीखते।

मनन अपने मन से ज्ञान के अन्तर्गत आने वाले विषयों के अध्ययन व चिन्तन करने को कह सकते हैं। मनुष्य वह होता है जो ज्ञान प्राप्ति कर उसके अनुसार आचरण भी करता है। जो मनुष्य ज्ञान, सामाजिक नियमों व सत्य मान्यताओं के विरुद्ध आचरण करता है वह समाज व देश में निन्दनीय होता है। मनन की अवस्था से ऊंची एक अवस्था विवेक ज्ञान से युक्त होने की होती है। विवेक की प्राप्ति मुख्यतः उन लोगों को होती है जो वेदादि साहित्य का अध्ययन, आचरण व योगाभ्यास का विधिवत अभ्यास कर संसार में सर्वत्र व्याप्त ईश्वर का साक्षात्कार करने में सफल होते हैं। ईश्वर के साक्षात्कार से मनुष्य का अज्ञान पूरी तरह से नष्ट हो जाता है। वह निर्भ्रान्त हो जाते हैं। मुण्डकोपनिषद के ऋषि का वचन है-

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे पराऽवरे॥

इसका ऋषि दयानन्द जी का किया हुआ अर्थ है-'जब इस जीव के हृदय की अविद्या अज्ञान-रूपी गांठ कट जाती है, (तब) सब संशय छिन्न होते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं। तभी उस परमात्मा (का) जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, उस में निवास करता (स्थित होता व साक्षात्कार करता) है।' परमात्मा में निवास का अर्थ उसका साक्षात्कार वा प्रत्यक्ष करने सहित समाधि अवस्था में जो आनन्द की उपलब्धि होती है, उस स्थिति की प्राप्ति अभिप्रेत है। विवेक को प्राप्त व्यक्ति की अवस्था जीवन-मुक्त मनुष्य की अवस्था होती है। वह जीवित तो होता है परन्तु उसका जीवन सुख व सम्पत्ति के भोग के लिये न होकर ईश्वर के चिन्तन-मनन सहित समाधि अवस्था में स्थित रहने तथा स्वार्थ का पूर्णतः त्याग कर परहित के कार्यों यथा विद्या का प्रसार, धर्मोपेदेश आदि में जीवन बिताने का होता है। ऋषि दयानन्द जी ऐसे ही पुरुष थे। आर्यसमाज में ऐसे अनेक पुरुष हुए हैं। पं॰ लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द और पं॰ गुरुदत्त विद्यार्थी सहित स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती एवं आचार्य डा॰ रामनाथ वेदालंकार जी को भी ऐसे जीवन-मुक्त व्यक्तियों में सम्मिलित कर सकते

हैं। संसार में विवेक प्राप्त व जीवनमुक्त मनुष्य न के बराबर हैं। विचार करने पर यही ज्ञात होता है कि हमें मनुष्य जीवन मनुष्य बनने और विवेक प्राप्त करने के लिए ही मिला है परन्तु हम इन ऐश्वर्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करते।

हमने जो चर्चा की है उससे यह स्पष्ट होता है कि संसार में सत्य व असत्य को जानने व सत्याचरण करने वाले मननशील मनुष्य बहुत कम हैं। अधिकांश मनुष्य अविद्या व कुछ सामान्य विद्या से युक्त स्कूली शिक्षा को पढ़कर धन सम्पत्ति कमाने तथा सुख भोग आदि में ही अपना जीवन व्यतीत कर देते हैं। वह जिस मत में जन्म लेते हैं उससे बाहर निकल कर वेदाध्ययन, स्वतन्त्र अध्ययन व चिन्तन नहीं करते। उन्हें इसकी आवश्यकता भी अनुभव नहीं होती। यदि उन्हें विद्या का महत्व पता होता तो वह अवश्य विद्या प्राप्ति के लिये प्रयत्न करते। ऋषि दयानन्द जी को जब विद्या का महत्व विदित हुआ तो उन्होंने इसके लिये अपना घर, अपने माता-पिता, कुटुम्बी, मित्र व ग्राम तक का त्याग कर दिया था और विद्या प्राप्ति के लिये बहुत ही संघर्ष एवं कष्ट-साध्य जीवन व्यतीत किया। यदि संसार के सभी मनुष्य ऋषि की इस भावना के पच्चीस प्रतिशत भावना वाले भी होते तो यह विश्व सबके लिये सुख का धाम बन जाता। मत-मतान्तरों पर दृष्टि डालते हैं तो विदित होता है कि वह अविद्या को दूर करने और विद्या को जन-जन में पहुंचाने के इच्छुक नहीं हैं। वह अपने मत का और अपना प्रभाव बढ़ाना ही अपना उद्देश्य व कर्तव्य समझते हैं। उन्हें ईश्वर व आत्मा को जानने तथा मनुष्य जीवन के उद्देश्य व उसको प्राप्त करने के साधनों को जानने में भी किञ्चित रुचि नहीं है। इसी कारण से पूरे विश्व में अशान्ति है। समय-समय पर अनेक देशों में आपस में युद्ध आदि भी होते रहते हैं। कुछ मत-मतान्तर दूसरे देशों के लोगों को जो उनके मत से भिन्न मतों को मानते हैं, उनके धर्मान्तरण व मतान्तरण सहित अपनी जनसंख्या वृद्धि में लगे रहते हैं। वह यह भी सोचने का कष्ट नहीं करते कि उनके कारण किन-किन मनुष्यों को किस-किस प्रकार से कष्ट पहुंच रहा है। अतः संसार में प्रायः सभी वा अधिकांश मनुष्य सत्याचरण से प्रायः दूर ही हैं। सत्याचरण तभी हो सकता है कि जब मनुष्य को सत्य व असत्य का ज्ञान हो, सत्य के लाभ और असत्य की हानियों का भी पता हो तथा वह सत्य के पालन में दृढ़ प्रतिज्ञ हों। ऐसा न होने पर सत्याचरण नहीं हो सकता। हमारे देश में सभी ऋषि, मुनि व योगियों सहित राम, कृष्ण, चाणक्य, दयानन्द जी आदि सत्याचरण करते थे। इनका जीवन आदर्श जीवन था। इन्हीं का अनुकरण हम सबको करना है। सत्याचरण ही मनुष्य का धर्म एवं कर्तव्य है। इससे मनुष्य का वर्तमान जीवन भी उन्नत व सुखी होता है तथा परलोक भी सुधरता है। ऋषि दयानन्द ने संसार के सभी मनुष्यों की सहायता के लिए सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ सहित पंचमहायज्ञ विधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि एवं आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थ लिखकर अविद्या को दूर करने का प्रयत्न किया था। इन ग्रन्थों से अविद्या दूर हो सकती थी परन्तु संसार के लोगों ने अपने अज्ञान व अज्ञान पर आधारित हितों के कारण इन पर ध्यान ही नहीं दिया। यह सुनिश्चित है कि यदि हम मननशील व विवेकवान् नहीं बनेंगे और सत्याचरण नहीं करेंगे तो हमारा इहलोक एवं परलोक नहीं सुधरेगा। हमारे जीवन में **'चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात'** वाली कहावत चरितार्थ होगी। अतः हम सबको मननशील होकर, सत्य व सत्य धर्म का अनुसंधान कर सत्याचरण करना है। इस कार्य में वेद, दर्शन एवं उपनिषदों के अध्ययन सहित ऋषि दयानन्द एवं उनके अनुयायी विद्वानों के ग्रन्थ परम सहायक हैं। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्। ❑❑

आदर्श स्वरूप महापुरुषों के चरित्र की नाशक-मूर्तिपूजा

-गंगाशरण आर्य (मो०-९८७१६४४१९५)

सिखों के दस गुरु हैं। क्या आपने कभी भी उनके अनुयायियों द्वारा उन गुरुओं का वेश धारण करके कभी भी स्टेजों पर नाचते या मंचों पर उन्हें नाचते हुए देखा है? कभी नहीं देखा होगा क्योंकि वे अपने गुरुओं का आदर करते हैं, सम्मान करते हैं। उनका अपमान कभी किसी हाल में सहन नहीं कर सकते। इसी प्रकार क्या कभी किसी मुस्लिम को उनके अपने गुरु या मोहम्मद के वेश में नाटकों में नाचता हुआ देखा है। क्यों नहीं देखा क्योंकि मुस्लिम भी अपने महापुरुषों की बेइज्जती सहन नहीं कर सकते, उनको अपमानित नहीं कर सकते, किसी माई के लाल में हिम्मत नहीं कि कोई उनके महापुरुषों के बारे में कुछ कह दे तलवारें चल जाती हैं। ऐसे ही ईसाई भी हैं। केवल हिन्दू ही हैं जो अपने महापुरुष श्रीकृष्ण को राधा के संग व महात्मा शिव को पार्वती के संग स्टेज पर अपने बच्चों द्वारा उनके वेश धारण कराकर जिन गानों पर नचवाते हैं वे भी समाज में नशा व चरित्रहीनता को ही बढ़ावा देते हैं और उनके सारे आदर्श स्वरुप चरित्र को तार-तार कर उनकी खिल्ली उड़ाते हैं। उसके प्रतिफल पर जरा भी विचार नहीं करते कि ऐसा करने से आने वाली पीढ़ियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? राधा रानी जिसे कृष्ण की प्रेमिका बताते हैं उसका कोई नामोनिशान भागवत पुराण में भी नहीं है। पता नहीं किस कल्पित महारानी के साथ उनका प्रेम सम्बन्ध बना दिया। ना ही किसी कुब्जा या मीरा के साथ उनका कोई नाता रहा फिर भी उनका चरित्र उछालने में कसर नहीं रखी इन पौंगे पण्डितों ने। कहते हैं श्रीकृष्ण जैसा नीतिवान, गौपालक, सुदर्शन चक्रधारी, वीर योद्धा, वेदज्ञ, योगीराज, आप्तपुरुष, गृहस्थ में रहकर भी संयम का पालन करने वाला आज तक दूसरा नहीं हुआ ऐसा महाभारतकालीन कृष्ण का चरित्र आदर्शरूप तो हम अपने बच्चों को दिखाते नहीं उल्टा उनको चोर, रास रचाने वाला, स्त्रियों के कपड़े चुराने वाला, व्यभिचारी, नचकैया आदि बताने में अपनी शान समझते हैं। जगह-जगह कार्यक्रमों में मंचों पर रास-लीलाओं आदि का मंचन करके उनको अपमानित करने में लगे रहते हैं, सम्मान करना तो बहुत दूर की बात है जरा सा मान भी नहीं करते। इसी प्रकार महात्मा शिवजी को एक तरफ अपना परमात्मा बना कर पूजते हैं और दूसरी तरफ उनको नशेड़ी, भंगेड़ी, भूतों का संग करने वाला आदि बताने में बहुत गौरवान्वित होते हैं और अपनी शान समझते हैं।

भारत के प्रसिद्ध शिव मन्दिरों में शिवरात्रि के दिन मैं देखता हूँ कि लोग अक्सर दूध, पत्थर बेल या बेलगिरी के पत्ते, बेर व भांग धतूरे का भोग शिवजी को लगाने के लिए सुबह-सुबह अन्धेरे में ही मन्दिरों के बाहर लम्बी-लम्बी कतारों में खड़े हो जाते हैं और अपनी बारी का इंतजार करते हैं। कई बार मैं सोच में पड़ जाता हूँ कि कितनी भांग सारे दिन में शिवजी पी जाते हैं या उसके पत्ते खा जाते हैं क्या उनको नशा नहीं होता होगा? शिवलिंग पर चढ़ाया हुआ चढ़ावा जरा विचार करिए कि क्या स्वयं शिवजी को मिल जाता है? क्योंकि आप भांग सीधा शिवजी को

तो नहीं खिला रहे हैं या तो उनके साकार चित्र पर भोग लगा रहे हैं या निराकार रूप माने जाने वाले शिवलिंग पर चढ़ा रहे हैं। क्योंकि जो महात्मा शिव है वह तो आपके सामने उपस्थित ही नहीं है तो क्या बाद में आकर स्वयं शिवजी सब मन्दिरों में चढ़ाया गया चढ़ावा (बेल पत्थर, बेल के पत्ते, बेर, दूध व भांग आदि) लेकर जाएंगे? ऐसा तो आज तक किसी ने नहीं देखा अतः खूब विचार कीजिए कि बाद में उस चढ़ावे में आई भांग आदि चढ़ावे का क्या होता होगा। जिस धर्म के भगवान ही नशाखोर, चिल्मखोर, भंगेड़ी हो उस धर्म के युवा किस व्यसन से ग्रसित नहीं होंगे। मन्दिर में बैठे पुजारी इस प्रकार की नशे वाली चीजें चढ़ाने से भक्तजनों को मना क्यों नहीं करते, वे चुप्पी क्यों साधो रहते हैं कभी विचार किया है आपने? इन्हें केवल अपने पेट भरने से मतलब है समाज में बुराई पनपे इससे इनका कोई लेना-देना नहीं। मन्दिर के पुजारियों को मन्दिर टूटने अर्थात् मन्दिर के विनाश होने की चिंता है लेकिन नैतिकता का नाश दिन-प्रतिदिन हो रहा है इसकी चिंता नहीं, ये बुद्धि का दिवालियापन नहीं तो और क्या है? आने वाली पीढ़िया इनके द्वारा जान बूझकर प्रस्तुत किए गए महानपुरूषों में कामुकता के दृश्यों से क्या प्रेरणा लेंगी या ले रही हैं आप स्वयं समझदार हैं अपने आस-पास के बालकों के चरित्र अध्ययन करके देख लो आपको ज्ञात हो जाएगा। मैं पूछना चाहता हूँ ऐसा कब तक चलेगा? कब तक अपने महापुरुषों का भागवत आदि पुराणों के बहाने यूँही अपमान व दुर्गति करते रहोगे? एक तरफ तो उन्हें महात्मा, परमात्मा या भगवान की उपाधि देते हैं और दूसरी तरफ उनकी खिल्ली उड़ाते हैं? आखिर कब तक उन्हें बदनाम करने का ये सिलसिला जारी रहेगा? क्या बता सकते हैं आप? बहुत से लोग भगवान कहे जाने वाले 'महापुरुषों' की आड़ लेकर नशा करते हैं। मैं महात्मा शिव को भांग पीने वाला बताकर भांग को शिवजी के प्रसाद के रूप में महाशिवरात्रि के दिन गिलास भर-भर कर ग्रहण करने वालों से कहना चाहता हूँ कि पहली बात तो शिवजी ने कभी भी भांग आदि का नशा किया नहीं इसका कोई प्रमाण भी नहीं मिलता है और एक बार को यदि मान भी लिया जाए कि शिवजी भांग पीते थे इसलिए आप भी भांग पीते हैं तो मैं ये कहना चाहता हूँ ऐसे शिव भक्तों से कि यदि शिव बाबा की बराबरी ही करनी है तो पूरी-पूरी करो वह तो हलाहल विष (कड़वा जहर) भी पीया करते थे यदि उनका नाम लेकर आप भांग पी सकते हो तो जरा एक दो घूंट विष भी पीकर दिखाओं तो तुम्हें सच्चा शिव भक्त मानें, वे तो धतूरे का सेवन भी करते थे ऐसा पौराणिक बताते हैं तो आप भी धतूरा खाकर बताओ? जरा शिवजी की भाँति अपने गले में काला सर्प (कोबरा) धारण करके भी अपने मस्तक को चन्द्रमा की भाँति शीतल शान्त रखकर दिखाओ तो तुम्हें सच्चा शिव भक्त मानें क्यों क्या हुआ, साँप सूंघ गया क्या? नहीं बनना सच्चा शिव भक्त ? अरे! गुलामी के काल में मुसलमानों और वामपन्थियों द्वारा तथाकथित हिन्दुओं (आर्यों) के धर्म शास्त्रों में भारी मिलावट करके सनातन धर्म को नीचा दिखाने का प्रयास किया गया था जिसे आज का तथाकथित हिन्दू समाज बिना शोधित किए सर माथे लगा कर बैठा है। परमयोगी शिव का सम्बन्ध भांग, चिलम से जोड़ना, देवदारू के वन में ऋषि स्त्रियों के संग शिव के व्यभिचार की कथा, मोहिनी को देखकर शिव के कामातुर हो वीर्य स्खलन की अभद्र कथा, श्रीकृष्ण के कुब्जा संग व्यभिचार की कथा आदि-आदि ये सभी जहर है जो आज भी तथाकथित हिन्दू समाज पी रहा है और विनाश की ओर बढ़ रहा है।

हमें शिवजी पर चढ़ाई जाने वाली सामग्री के

औषधिय गुणों के बारे में जानकारी प्राप्त कर इनका सदुपयोग करना चाहिए ना कि शिवलिंग पर चढ़ाकर बेकार कर देने चाहिए। 'बेल' के पत्ते शुगर, ल्यूकोरिया, जोड़ों के दर्द, कोलेस्ट्रोल, अपच, आंव, मल व वायु में बदबू आदि बीमारियों को दूर करने के काम आता है। इसके फल बेल का मुरब्बा खाया जाए तो मल बन्धक होता है, बवासीर आदि आँतों की बीमारियों में फायदा होता है। गर्मियों में शीतलता प्राप्त करने के लिए व कब्ज दूर करने के लिए इसका जूस पीया जाता है। शिवलिंग पर चढ़ाई जाने वाली दूसरी वस्तु है 'बेर'। यह एन्टीऑक्सीडेंट का खजाना है। लीवर से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए एक फायदेमंद विकल्प है। बेर खाने से त्वचा की चमक लम्बे समय तक बरकरार रहती है। बेर में कैल्शियम और फॉस्फोरस पाया जाता है यह दाँतों और हड्डियों को मजबूत बनाता है। तीसरा चढ़ाया जाता है 'दूध' इसके अनेक फायदों में से एक फायदा यह है कि रात को दूध पीने से थकान दूर होती है और नींद अच्छी आती है क्योंकि दूध में अमीनो एसिड होते हैं जो कि नींद के हार्मोन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है। दूध पीने से शरीर की मांसपेशियों का विकास होता है इसमें कैल्शियम होता है जो हड्डियों को मजबूत बनाने में सहायक होता है। इसी प्रकार 'भांग' भी एक दिव्य औषधि है इसके अन्दर बहुत सारी दिव्यताएँ हैं जैसे यदि आपके कान में कितनी भी भयंकर पीड़ा हो रही हो इसकी पत्तियाँ पीस करके निचोड़कर दो-दो बूंद कान में डाल दी जाए तो तुरन्त इससे आराम मिल जाता है आपके सिर में दर्द हो तो इसकी लुगदी बनाकर सूंघ लिया जाए या एक-एक बूंद नाक में डाल दी जाए तो सिर दर्द में तुरन्त आराम होता है। यह पौधा वायुमण्डल को शुद्ध करता है। यदि आप थोड़ी मात्र में प्रयोग करते हैं तो यह आपके लिए औषध का काम करता है और यदि अधिक मात्र में प्रयोग करते हैं तो यह आपके बल को क्षीण करता है। भारतीय जनमानस में ऐसा भी प्रचलन में है कि भोले शंकर नशा करते थे वो भांग का नशा और भांग के साथ-साथ में 'धतूरे का नशा वो करते थे ऐसा आम लोगों में प्रचलन में है। वह शंकर जो वेदों के ज्ञाता थे, जो योग के प्रकाण्ड विद्वान थे यदि हम उनके प्रति ऐसी अवधारणा रखते हैं तो यह हमारी अज्ञानता है। वह साधना में लीन रहते थे, ध्यान की अवस्था में मस्त रहते थे, दुनिया से खोए-खोए से रहते थे लोगों को लगता था कि इन्होंने नशा किया हुआ है, उनका नशा संसार के पदार्थों का नशा नहीं हुआ करता था। उनका नशा तो उस भगवत भक्ति का होता था, आनन्दमय प्रभु की अवस्था में तल्लीन और हमेशा आत्मस्थ रहने का होता था। इसको हमने विस्मृत कर दिया और आज लोग नशा करते हैं। हमें इन पौधों का सदुपयोग करना चाहिए ताकि यह हमारे लिए औषधि का काम करें। इसी प्रकार धतूरे में भी अनेक औषधिय गुण हैं इसके पत्तों को पीस कर यदि पैरों की सूजन पर लेप कर लिया जाए तो सूजन खत्म हो जाती है, जोड़ों के दर्द में इससे फायदा होता है। अधिक मात्रा में इसका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए यह जहर होता है। कानों की भयानक परेशानी जैसे सूजन, पीड़ा या फंगस हो तो धतूरे के कोमल पत्तों व टहनियों का सौ ग्राम रस, पच्चीस ग्राम लहसुन कूट करके (छिलका रहित) उसमें डाल दें, और दस ग्राम नीम की पत्तियाँ व पचास ग्राम सरसों का तेल मिला लें इसको आप धीमी-धीमी आँच पर पका लें जब बाकी द्रव्य अच्छी तरह से लाल सूर्ख हो जाएं और जो धतूरे का पानी है वह सूख जाए तो उसको छान करके आप शीशी में भरकर रख लें यह बहुत ही लाभदायक कर्ण रोगान्तक बहुत दिव्य तेल है। (क्रमशः)

धर्म-चेतना–अन्ध-श्रद्धा से पोषित अधर्म

–पं॰ रामनिवास 'गुणग्राहक' सम्पर्क–(9079039088)

हमारे ऋषि-मुनियों ने धर्म की बड़ी सटीक एवं सरल परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। महर्षि मनु की– **'वेदोऽखिलो धर्ममूलं'** हो या **'नहि सत्यात् परो धर्मः नानृतात् पातकं परम्'**। दस लक्षणात्मक धर्म का सन्देश देने वाला प्रसिद्ध श्लोक हो या– **'धर्मजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः'** का आदेश। महर्षि कणाद ने– **'यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः'** कहा हो या आचार्य जैमिनी ने– **'यथा य एव श्रेयस्करः स धर्म शब्देन उच्यते'** की शिक्षा दी हो। योगाभ्यास के द्वारा आत्मदर्शन को परम धर्म भी कहा गया है– **'अयं तु परमो धर्मः यत् योगेन आत्मदर्शनम्'** । महर्षि व्यास ने जीवन-व्यवहार में सरलता को धर्म और कुटिलता को अधर्म– **'आर्जवं धर्म इत्याहु अधर्मो जिह्वा उच्यते'** माना है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में– "जो पक्षपात रहित, न्यायाचरण, सत्य, भाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है, उसको धर्म. ...मानता हूँ"। लगे हाथों ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी की एडवान्स्ड डिक्शनरी में धर्म शब्द की परिभाषा भी देख लें-'प्रकृति और मनुष्य के ऊपर किसी बड़ी सत्ता में विश्वास, जिसके द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति और ब्रहमाण्ड का नियन्त्रण होता है और जो मनुष्य को ऐसी आध्यात्मिक आशा देता है जो शरीर के नष्ट होने के बाद भी बनी रहती है। धर्म शब्द को परिभाषित करने वाले ऐसे और भी बहुत उद्धरण दिये जा सकते हैं, लेकिन धर्म के सम्बन्ध में आज हमारी समस्या अलग ढंग की है। महर्षि व्यास का मानना है– **"कर्मणा रहितो धर्मः न पृथिव्यां स्थिरो भवेत्"**–अर्थात् कर्म व्यवहार से रहित धर्म पृथ्वी पर स्थिर नहीं रह सकता, वह नष्ट हो जाता है। आज धर्म केवल श्रेणी का विषय बनकर रह गए है। जब धर्म चर्चा का व्यवहार से कोई लेना-देना नहीं रहता तो धर्म के नाम पर व्यावहारिकता से हटकर अव्याव-हारिक कल्पनाएँ, बेसिर-पैर की बातें चलने लगती है ! आज हमारा धार्मिक जगत ऐसी ही कल्पनाओं, चमत्कारों व तर्कहीन कथा-कहानियों का अन्ध कूप बनकर रह गया है! कहने की आवश्यकता नहीं कि चूँ-चूँ का मुरब्बा या भानुमती का पिटारा बन चुका धर्म आसाराम बापू, रामपाल दास और राम रहीम जैसे अपराधियों का अखाड़ा ही बनेगा ।

आज का सबसे कड़वा सच और सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह कि आज का मनुष्य धार्मिक बनने की अपेक्षा धार्मिक दिखने का ही प्रयास करता है। धर्म को जाने-समझे बिना धर्म के नाम पर लाखों रुपये खर्च करने वाले, तीर्थ यात्रा के नाम पर यहाँ-वहाँ भागते फिरने वाले और विद्या विहीन गुरुओं के मठ-मन्दिरों, आश्रमों, डेरों में जाकर उनकी जी हजूरी करने वाले धर्मान्ध स्त्री पुरुष ही धर्म का सत्यानाश करने वाले हैं। बाजार में अगर कोई नकली सामान बेचता है तो सब लोग उसे एक स्वर से बुरा बताते हैं, कोई भी उसका समर्थन नहीं करता, लेकिन धर्म के नाम पर अधर्म, अन्धविश्वास और पाखण्ड परोसने वाले के विरुद्ध उसके अन्ध भक्त एक शब्द भी सुनने को तैयार नहीं होते। कोई भी व्यक्ति धर्मगुरू बनकर कुछ भी अण्ड-बण्ड इसलिए बोलता रहता है क्योंकि उसके अन्धभक्त एक अभेद्य सुरक्षा कवच बना किसी को प्रश्न पूछने तक की अनुमति नहीं देते। धर्मगुरू कहे-'पाँच फुट

काकड़ी पच्चीस फुट का बीज' तो चेले बिना विचारे स्वीकार करते हुए कहते हैं–"सत्य वचन गुरुदेव" कभी तो होता होगा। फल पाँच फुट लम्बा और बीज पच्चीस फुट लम्बा होना असम्भव है। बीज फल से छोटा ही होता, है, लेकिन गुरु जी ने कहा है तो झूठ नहीं हो सकता। हो सकता है सतयुग या त्रेता युग में कभी न कभी तो होता ही होगा। ऐसी मानसिकता वाले भक्त जब तक रहेंगे, तब तक आसाराम, रामपाल दास और राम रहीम जैसे धर्मगुरु होते ही रहेंगे ! बडी कड़वी सच्चाई यह है कि जब तक मूर्ति पूजा रहेगी जब तक अनेक भगवानों-अवतारों की मान्यता रहेगी, जब तक फलित ज्योतिष का अन्धविश्वास रहेगा, जब तक राशि, नक्षत्र, गृह आदि हमारे सुख-दुःख देने वाले बने रहेंगे, जब तक धर्म और ईश्वर सम्बन्ध हर मान्यता को तर्क की कसौटी पर जाँचा-परखा न जाएगा और जब तक पुराण हमारे धर्मग्रन्थ बने रहेंगे, तब तक आसाराम, रामपाल दास, राधे, इच्छाधारी बाबा, चन्द्रा स्वामी, राम रहीम जैसा अपराधी प्रवृत्ति के लोग नाम बदल-बदलकर हमारे बीच आते रहेंगे। तब तक निर्मल बाबा का मल. दरबार लगता रहेगा, तब तक झाड़-फूंक करने वाले तान्त्रिक ज्योतिषी नारी जाति की गरिमा से खिलवाड़ करते रहेंगे ।

मैं कई बार यह सोच-सोचकर व्याकुल हो जाता हूँ कि धर्म के नाम पर आज का मनुष्य धर्म गुरु बनकर क्रूरतम अत्याचार कर सकता है और धर्मभीरु चेला बनकर हर प्रकार का अत्याचार-दुराचार सह सकता है। धर्म है क्या? यह जानने की चिन्ता न धर्म गुरू को है और न उसके अन्धभक्त चेलों को। जब चेलों के लिए उसके गुरु का उपदेश ही सबसे बड़ा प्रमाण है तो गुरु को क्या पागल कुत्ते ने काटा है जो वेद शास्त्र पढ़ने में माथा पच्ची करे। जब लोग पीतल को ही प्रसन्नता पूर्वक सोने के भाव ले रहे हैं और जो उन्हें कहे कि यह सोना नहीं पीतल है, उससे लड़ने को आते हों तो पीतल को सोना बनाकर बेचने का व्यापार तो दिनों-दिन बढ़ेगा ही !

धर्म की एक बड़ी सटीक परिभाषा प्रायः मेरा ध्यान खींचती रहती रहती है। किसी विचारशील व्यक्ति ने लिखा है–**'सीमानो नातिक्रमणं यत् तत् धर्मम्'**–अर्थात मनुष्य अपनी सीमा का, अपनी मर्यादा का अतिक्रमण न करे, यही उसका धर्म है। सरल शब्दों में कहें तो हम अपनी व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय कर्तव्य कर्मों को निर्धारित करने वाली मर्यादाओं का सच्चे मन से पालन करें, उनका उलंघन न करें, यही धर्म है! मैं एक पुत्र के रूप में, भाई, बहिन के रूप में तथा पति-पत्नी या माता-पिता के रूप में अपने पारिवारिक कर्तव्य कर्मों का सच्चे मन से पालन करता रहूँ। सामाजिक, स्तर पर मैं एक अध्यापक के रूप में, एक अधिकारी-कर्मचारी के रूप में, एक दुकानदार के रूप में, राजनेता, मन्त्री-सन्तरी या वकील, डॉक्टर, किसान-व्यापारी के रूप में समाज द्वारा स्वीकृत कर्तव्य कर्मों का सच्चे हृदय से पालन करता रहूँ यही मेरा धर्म है। ध्यान देने वाली बात यह है कि मैं खाने-पीने, सोने-जागने सम्बन्धी व्यक्तिगत कर्तव्यों का पालन न करूँगा तो दुष्परिणाम मेरे व्यक्तिगत स्तर या पारिवारिक स्तर पर ही होगा। अगर मैं सामाजिक व राष्ट्र के प्रति निर्धारित कर्तव्यों का पालन न करूँगा तो इसका दुष्परिणाम सामाजिक व राष्ट्रीय स्तर पर अधिक घातक होगा। इसीलिए चाणक्य घोषणा करते हैं–**'सर्वे धर्माराजधर्माणि प्रविश्यन्ते'।** अर्थात् हमारे जीवन से जुड़े हुए धर्म यानि कर्तव्य राजधर्म, राष्ट्रीय कर्तव्यों में समाहित हो जाते हैं। सीधा अर्थ है हम अपने राष्ट्रीय कर्तव्यों के प्रति अधिक जिम्मेदार बनें ! ये अन्धश्रद्धा आज व्यक्ति-गत न रह कर राष्ट्रीय समस्या का रूप धारण कर चुकी है, इससे मुक्त होना ही पड़ेगा !! ❑❑

अंग्रेजों को खटका आर्यसमाज

लेखक : पं० चमूपति एम० ए०

राज विद्रोह के आरोप – पटियाले का अभियोग

२३ जून १९०९ के 'सिविल ऐंड मिलिटरी गजट' में एक भारतीय का पत्र छपा जिस में सत्यार्थप्रकाश के उद्धरणों से प्रमाणित करने का यत्न किया गया कि आर्य समाज वास्तव में विदेशियों के बहिष्कार के लिए ही स्थापित हुआ है । उदाहरणतया सत्यार्थप्रकाश में लिखा था कि राज्य का अधिकार क्षत्रियों का है । अब क्षत्रिय भारत के बाहर का तो हो ही नहीं सकता । इस से विदेशी शासन का विरोध स्पष्ट है ! सत्यार्थप्रकाश में मनु के प्रमाण से लिखा है :

योऽवमन्येत द्विजो मूले स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
स साधुभिर्वहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः॥

इस से निस्सन्देह विदेशियों का भारत से बहिष्कार अभिप्रेत है !

"भारतीय" महोदय का सब से बुरा आक्षेप यह था कि ला० लाजपतराय के कारावास से आर्य समाज ने अपनी नीति बदल ली है । समाज की यह घोषणा कि वह एक विशुद्ध धार्मिक सभा है, इस कारावास का परिणाम है। लाहौर समाज की अन्तरंग सभा के १८८६ के निश्चय के आधार पर हम सिद्ध कर चुके हैं कि यह आप शुद्ध है । समाज की विशुद्ध धार्मिकता की घोषणा राजनीतिक घोषणा नहीं ।

इस लेख के उत्तर में म० मुंशीराम के तीन और प्रो० (इस समय सर) गोकुलचन्द नारंग एम०ए०, पी०एच०डी० का एक पत्र प्रकाशित हुआ। इन पत्रों में ऋषि की विश्व व्यापक शिक्षा की– जिस का किसी देश-विशेष से नहीं, किन्तु संसार भर की सभी जातियों से एक सा सम्बन्ध है–विशद व्याख्या की गई। दोनों महानुभावों ने प्रतिपादित किया कि वेद तथा दयानन्द का "क्षत्रिय" भारत का "खत्री" नहीं, किन्तु किसी भी देश का बांकुरा वीर है । प्रत्येक देश की बागडोर ऐसे ही लोगों के हाथ में होनी आवश्यक है । इन सब प्रश्नों पर आर्य समाज एण्ड इटस डिट्रैक्टर्स (Arya Samaj & its Detractors) में बड़ा प्रकाश डाला गया है । इस पुस्तक के लेखक महा० मुंशीराम और रामदेव थे । यह पुस्तक पटियाला अभियोग की समाप्ति पर लिखी गई । इस पुस्तक की चर्चा बहुत रही । पार्लियामेण्ट के सदस्यों तक यह पहुँची । भारतीय सरकार (Government of India) की वार्षिक रिपोर्ट में इसका वर्णन था और विलायत के सुप्रसिद्ध पत्रों में भी इसकी चर्चा रही । विलायत के सुविख्यात त्रिमासिक पत्रिका Round Table में इस पुस्तक की समालोचना कई पृष्ठों में की गई । उस समय इस पुस्तक की बड़ी चर्चा थी । भारतवर्ष पर जिन यूरोपियन महोदयों ने पुस्तकें लिखीं उनमें से बहुतों ने इसमें से उद्धरण दिए ।

१९०८ तथा १९०९ के बच्छोवाली आर्यसमाज के उत्सव के अवसर पर महात्मा मुंशीराम के दो ऐतिहासिक व्याख्यान हुए। १९०८ के व्याख्यान में उन्होंने निम्नलिखित घटनाओं का वर्णन किया–

१. गुलाबचन्द एक सिख रेजिमेंट में लेखक था। वह कर्तव्यपरायण तथा सत्यप्रिय और परिश्रमी था। परन्तु साथ ही अधिकारियों को उत्तर देने में निर्भीक भी था। पहिले तो उस की इस बात की प्रशंसा होती परन्तु अब उस का यही

गुण कांटे की तरह खटकने लगा और उसे इस लिए पृथक कर दिया गया कि वह "आर्यसमाजी" है। इस प्रकार आर्यसमाजी का अर्थ हुआ निर्भीक अर्थात् उद्दण्ड।

२. जि० करनाल के तीन जैलदारों में से एक आर्य समाजी था। उस की डायरी में लिख दिया गया कि "वह जैलदार तो अच्छा है परन्तु उस का निरीक्षण किया जाना चाहिए क्योंकि वह आर्य समाजी है।

३. एक डिप्टी कमिश्नर ने एक स्थान के प्रमुख पुरुषों को बुला कर कहा कि यदि तुम्हारे यहाँ कोई आर्य समाजी रहता हो तो उसे निकाल दो। स्वयं उन प्रमुख पुरुषों ही में दो आर्य समाजी थे। उन्होंने पूछा कि आर्य समाजियों के विरुद्ध क्या किया जाय? डिप्टी कमिश्नर ने कहा :– "कुछ करो, तुम्हारे विरुद्ध कोई कार्यवाही न होगी।" वे बोले :–आप स्पष्ट सहायता करें तो आज्ञा का पालन किया जा सकता है और यदि आप ही स्पष्ट कार्यवाही करने से डरते हैं तो फिर हम में यह साहस कहाँ?

४. एक रेजिमेंट के सिपाही आर्य समाजी थे। उन्हें यज्ञोपवीत उतार देने की आज्ञा दी गई। वे जाति के जाट थे। उन्होंने जाट सभा द्वारा निवेदन पत्र भिजवाया। इसे आपत्ति जनक समझा गया।

५. एक मुसलमान जमादार ने एक यूरोपियन लेफटिनेंट को विवाद में हरा दिया। इस की शिकायत हुई और मुसलमान को डाँट कर कहा गया–तुम आर्य समाजी हो। उस ने उत्तर दिया– मैं तो मुसलमान हूँ। अधिकारी ने उसे और डाँटा और कहा–तुम मुसलमान आर्यसमाजी हो।

६. आर्य समाज के प्रचारक पं० दौलतराम झाँसी गये। वहाँ उन्होंने सिपाहियों को भी उपदेश किया और उन से अनाथालय के लिए चंदा लाये। उस पर अभियोग चलाया गया और दण्ड यह दिया गया कि या तो झाँसी या उस के पाँच मील के अन्दर रहने वाले तथा सरकार को १००) मालिया या २०००) की आय पर कर देने वाले दो सज्जनों की जमानतें दिलाए या १ वर्ष कठोर कारावास का दण्ड भुगते। यों तो दौलतराम आगरा के खाते-पीते घर का था परन्तु झाँसी में वह अजनबी-सा था। इसलिए उसे कारावास भुगतना पड़ा।

७. जोधपुर में वायसराय महोदय पधारे थे। उन के मार्ग में समाज मन्दिर पड़ता था। पोलीस ने समाज वालों से कहा– अपना फट्टा तथा झंडा उतार लो। उन के इनकार करने पर पोलीस ने स्वयं ये दोनों चिह्न उतार लिये। ये सब घटनाएँ समाज के प्रति उस समय के कुछ सरकारी कर्मचारियों की कठोर दृष्टि पर स्पष्ट प्रकाश डाल रही हैं। समाज के अधिकारी सरकार से मिलते नहीं थे और सरकार इन की इस झिझक को सन्देह की दृष्टि से देखती थी। महात्मा जी ने अपने व्याख्यान में समाज की स्थिति एक संन्यासी की बतलाई जिस का प्रचलित राजनीतिक आन्दोलनों से कुछ सम्बन्ध नहीं। समाज राजा-प्रजा दोनों के प्रति अपना कर्तव्य पालन कर देगा पर झुकेगा किसी के आगे भी नहीं। जोधपुर की घटना का वर्णन करते हुए जब महात्मा जी ने कहा– ओ३म् का झंडा हमारे हृदयों पर आरोपित है, संसार की सब दिशाओं में ओ३म् अंकित है, सब शक्तियों, सब क्रियाओं पर ओ३म् की शोभा है; इस ओ३म् को कौन मिटा सकता है? यह सुनते ही जनता पर एक समाँ बँध गया। हृदय बल्लियों उछलने लगे। निरुत्साह हृदयों को साहस तथा धैर्य मिला। महात्मा जी का शब्द शब्द सच्ची धर्म-भावना में भीजा हुआ था। उस में गर्व तो था पर विनय से सुशोभित। उस में विनय था पर आत्माभिमान से विभूषित।

इस राज विद्रोह काण्ड की कुछ और घटनाएँ भी उल्लेख के योग्य हैं–

पंजाब की एक ब्रिगेड में आज्ञा दी गई कि

आर्य समाज अथवा किसी अन्य राजनीतिक सभा में न जाया करें ।

एक भारतीय रेजिमेंट के एक डाक्टर को उस के अफसर ने त्याग-पत्र का मसविदा लिख कर दिया कि इस के द्वारा समाज से सम्बन्ध विच्छेद कर लो। यह आज्ञा न मानने के कारण आखिर उसे सेवा छोड़नी पड़ी ।

रोहतक में किसी ने डौंडी पिटवा दी कि आर्य समाज का मन्दिर सरकार ने जब्त कर लिया है। समाज के प्रधान के पूछने पर डिपुटी कमिश्नर के कार्यालय ने लिखा कि ऐसी डौंडी सरकार की आशा से नहीं पीटी गई परन्तु तो भी इस के विरुद्ध सरकार ने अपनी ओर से घोषणा तक करना स्वीकार नहीं किया ।

इन्द्रजित् शाहजहाँपुर की जिला-कचहरी में काम करता था। उस ने रोगी होने के कारण अवकाश लिया। वह आर्यसमाज का उत्साही कार्यकर्ता था उसे आज्ञा दी गई कि या तो समाज का प्रचार करें या सरकार की सेवा ।

इन्दौर आर्यसमाज का प्रधान लक्ष्मणराव शर्मा पोलीस के इन्स्पेक्टर जनरल के कार्यालय में हैड अकाउंटेंट था। उसने समाज के जलूस की आज्ञा माँगी । इस पर उसे समाज छोड़ देने को कहा गया। ऐसा न कर सकने के कारण उसे सरकार की सेवा छोड़ देनी पड़ी।

ये केवल उदाहरण हैं। इन से स्पष्ट है कि आर्यसमाजी होना उन दिनों कितने जोखिम का काम था। आर्य पुरुष कुछ बहुत धनवान नहीं थे। उन की आजीविका साधारण थी। परन्तु अब वह साधारण आजीविका भी सुरक्षित न थी। धर्म उस की भी बलि माँगता था। सचमुच वे लोग धन्य थे जिन्होंने धन की, जन की, तथा मन की यह बलि खुशी खुशी दे दी। उन का वह धर्म वास्तव में बहुमूल्य था, जिसे उन्होंने अपनी बहुमूल्य बलि के दामों खरीदा। कोई जेल में डाल दिया गया, इस लिए कि वह आर्य समाजी है। किसी के बाल बच्चों तक की रोटी छीन ली गई, इसलिए कि वह वेद और दयानन्द का भक्त है। यह भक्ति कैसी महंगी थी ? कितने आत्मोत्सर्ग से कमाई गई ? ❑❑

(प्रस्तुति : अमित सिवाहा, पुस्तक : आर्यसमाज का इतिहास से उद्धृत)

क्रोध अभिशाप है इससे बचिये !

"क्रोधाद् भवति संमोहः संमोहात् स्मृति विभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशः बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥"

क्रोध से संमोह (अविवेक) उत्पन्न होता है, संमोह से स्मृति का विभ्रम होता है। स्मृति का विभ्रम होने से बुद्धि नष्ट होती है, बुद्धि नाश से मनुष्य नष्ट हो जाता है। अर्थात् उचित अनुचित के विवेक से शून्य हो जाता है। —गीता

इन्द्रियों की अपेक्षा मन श्रेष्ठ है, मन की अपेक्षा बुद्धि अधिक श्रेष्ठ है, बुद्धि की अपेक्षा आत्मा और अधिक श्रेष्ठ है ।
—गीता

जो धर्म को जानने की इच्छा करें, उनके लिये वेद ही परम प्रमाण है।

(पृष्ठ ४ का शेष) गुरुकुल कांगड़ी को आर्यसमाज से अलग करना संस्कृतिक.....

हुए शिक्षा मंत्रालय और यू॰जी॰सी॰ के अधिकारियों से नियम विरुद्ध, अवैध व असंवैधानिक और अनैतिकता से खुद को कुलाधिपति के रूप में नियुक्त करने का कुकृत्य कर रहे थे।

यू॰जी॰सी॰ एवं शिक्षा मंत्रालय द्वारा गत ११ फरवरी को डॉ॰ सत्यपाल सिंह को नियम विरुद्ध कुलाधिपति नियुक्त भी कर दिया गया है। जबकि सुदर्शन शर्मा पहले से ही कुलाधिपति के रूप में कार्य कर रहे हैं। ऐसा कैसे मुमकिन हो सकता है कि एक कुलाधिपति के रहते दूसरे कुलाधिपति को नियुक्त किया जा सके?

आर्य समाज के लोगों के बलिदान, दान तपस्या उनके खून पसीने से सींच कर खड़ी की गयी संस्था खतरें में है। आर्य समाज के लोग सभाएं नहीं चाहती कि उनकी विचारधारा पर आधारित संस्था को कोई दूसरी संस्था चलाये। निश्चित तौर पर यह महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, समेत उन लाखों त्याग तपस्या और बलिदानी लोगों की हार होगी, जिन्होंने पाई पाई जोड़कर यह गुरुकुल खड़ा किया था। अगर अब गुरुकुल कांगड़ी को आर्य समाज से और आर्य समाज को गुरुकुल कांगड़ी से अलग किया गया तो यह न केवल संस्कृतिक अपराध होगा बल्कि यह महर्षि दयानन्द जी के प्रति उक्त लोगों की गद्दारी भी होगी ! ❑❑

(पृष्ठ १० का शेष) सन्देशखाली का राक्षस कौन ?

शेख के अलावा टी॰एम॰सी॰ के ही नेता उत्तम सरदार और शिवप्रसाद हजारा को भी इस भयानक ज्यादती के लिए जिम्मेदार ठहराया है। महिलाओं का दावा है, "किसी महिला का पति तो है, लेकिन उस पति का अपनी पत्नी पर अधिकार नहीं है। कुछ पुरुषों को अपनी पत्नियों को हमेशा के लिए छोड़ना पड़ गया है, क्योंकि टी॰एम॰सी॰ के गुंडे उन्हें अपने साथ रख रहे हैं। ऐसे में गांव के पुरुषों ने घर छोड़ दिया है और वो दूसरे राज्यों में जाकर काम कर रहे हैं, क्योंकि अगर वो यहां रहे तो उन्हें जान का खतरा है।

मामले की गंभीरता को देखते हुए पश्चिम बंगाल के राज्यपाल सी॰वी॰ आनन्द बोस को भी केरल दौरा बीच में छोड़ने पर मजबूर कर दिया और वो भी संदेशखाली पहुंच गए। पीड़ित महिलाओं से बातचीत के बाद राज्यपाल सी॰वी॰ आनंद बोस ने दावा किया, "मैंने जो देखा वो भयावह और हैरान कर देने वाला मामला है। मैंने वो देखा है, जो ताउम्र मैं कभी नहीं देखना चाहूंगा। मैंने वो देखा, जो कभी नहीं देखा था। मैंने वो सुना, जो कभी नहीं सुना था। किसी भी सभ्य समाज के लिए ये एक शर्म की बात है।"

बंगाल की राजधानी कोलकाता से करीब ८० किलोमीटर दूर स्थित संदेशखाली सात फरवरी से सुलग रहा है। प्रदर्शन के दौरान महिलाएं लाठी-डंडों और बांस के साथ सड़कों पर उतर आईं। महिलाएं तृणमूल के स्थानीय नेता शेख शाहजहां, ब्लॉक प्रमुख शिवप्रसाद हाजरा और उनके साथी उत्तम सरदार को गिरफ्तारी की मांग कर रही हैं। लेकिन सवाल है क्या इस सब मामले की एक जाँच कमेटी बनेगी जो बीस साल बाद अपनी रिपोर्ट देगी जब तक पीडिता या तो मर चुकी होगी या न्याय की आस में अंतिम साँस ले रही होगी। ❑❑

ज्ञान और कर्म–बिना कर्म ज्ञान व्यर्थ है, बिना ज्ञान कर्म अंधेरे में भटकने के समान है।

आर. एन. आई. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S.
०५-११/०३/२०२४
भार ४० ग्राम

मार्च २०२४

रजिस्टर्ड नं० DL (DG-11)/8029/2024-26
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०२४-२६
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2024-26

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी **ग्राहक संख्या** अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएँ, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

—दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष एवं तार्किक समीक्षा के लिए
उत्तम कागज, मनमोहक जिल्द एवं सुन्दर आकर्षण मुद्रण
(द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23x36%16	मुद्रित मूल्य ₹60	प्रचारार्थ ₹40	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
विशेष संस्करण (सजिल्द) 23x36%16	₹100	₹60	
पॉकेट संस्करण	₹80	₹50	
विशिष्ट पॉकेट संस्करण	₹150	₹100	
स्थूलाक्षर (सजिल्द) 20x30%8	₹200	₹120	
उपहार संस्करण	₹1100	₹750	
सत्यार्थ प्रकाश अंग्रेजी अजिल्द	रु. २५०/-	रु. १६०/-	
सत्यार्थ प्रकाश अंग्रेजी सजिल्द	रु. ३००/-	रु. २००/-	

कृपया एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द जी की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें..

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, नया बांस, दिल्ली-6
Ph: 011-43781191, 09650522778
E-Mail: aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका
श्री सेवा में........................
ग्राम........................
डा०........................
जिला........................

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।